सहजानंद शास्त्रमाला

मनोहर-पद्यावली

रचयिता

अध्यात्मयोगी, न्यायतीर्थ, सिद्धान्तन्यायसाहित्यशास्त्री

पूज्य श्री क्षु० मनोहरजी वर्णी "सहजानन्द" महाराज

प्रकाशक

श्री सहजानंद शास्त्रमाला, मेरठ

एवं

श्री माणकचंद हीरालाल दिगम्बर जैन पारमार्थिक न्यास

गांधीनगर, इन्दौर

Online Version : 001

http://sahjanandvarnishastra.org/

ॐ

श्री वीतरागाय नमः

मनोहर-पद्यावलि

रचियता:—

पूज्य क्षुल्लक श्री १०५ मनोहर लाल जी वर्णी न्यायतीर्थ
(व्रत लेने के पूर्व गृहस्थावस्था में रचित)

—०:०:०—

प्रकाशक—

जैन समाज, मुज़फ़्फ़रनगर

प्रथम संस्करण १०००

कार्तिक बदी १०, सं० २००७
(३५वीं वर्षगांठ पूज्य क्षुल्लक जी महाराज)

मूल्य ।=) छः आने

Report any errors at vikasnd@gmail.com

"पूज्य वर्णी जी" (कवि के रूप में)

http://www.jainkosh.org

आज आपका परिचय एक ऐसे महान आत्मा से कराते हुए अति हर्ष होता है जो न केवल त्यागी ही हैं अपितु उत्कट विद्वान, शांति की प्रति मूर्त्ति और उच्च कोटि के कवि भी हैं। रत्न मिट्टी में से ही निकलता है, कमल कीचड़ में से ही पैदा होता है। रियासत ओरछा, जिला झांसी में दमदमा नामक एक छोटे से गांव में कार्तिक बदी १०, विक्रम सं० १९७२ को श्रीमती तुलसाबाई जी की कुक्षि से एक रत्न पैदा हुआ जिसने अपनी आभा से तमाम भारतवर्ष को प्रकाशित कर दिया। आप हैं परम पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक मनोहर लाल जी वर्णी, जिनको कौन ऐसा व्यक्ति है जो न जानता हो। ९ वर्ष की अवस्था में ही आप के पूज्य पिता जी श्री गुलाब चन्द्र जी जो बड़े धर्मात्मा व सज्जन थे आपको अपने ही पुरुषार्थ से महान पद प्राप्त करने के लिये सदैव के लिये छोड़ कर चल बसे।

बचपन से ही आपकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण है। विद्याध्ययन में आप की विशेष रुचि है। आप ८ वर्ष की अवस्था में ही सागर विद्यालय में विद्याध्ययन के लिये चले गये। १७ वर्ष की अवस्था में ही आपने न्यायतीर्थ और शास्त्री की परीक्षायें पास कर ली। विद्वता के साथ २ ही आपकी प्रवचन-प्रणाली ऐसी मनोहर है कि श्रोताजन मन्त्र मुग्ध से हो जाते हैं। लेखन-शैली तो आपकी अद्वितीय है ही। इन सब के अतिरिक्त आप को बचपन से ही संगीत का शौक रहा है। जब आप सागर विद्यालय में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे उस समय आप ने एक छोटा सा हारमोनियम खरीदा और सीखना शुरू कर दिया। एक दिन गुरू जी ने देख लिया। फौरन ही उस हारमोनियम को बेचना पड़ा। परन्तु संगीत का इतना शौक था कि एक बांसुरी खरीद ली और उस ही को बजाने लगे। आपको कविता व छंद शास्त्र का भी पूर्ण ज्ञान है जिसका पता इस पुस्तक से सहज ही चल जायेगा।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

शांति की तो आप प्रति मूर्ति ही हैं। क्रोध और मान तो आपको छू तक भी नहीं गया है। सदैव प्रसन्नचित्त दिखलाई देते हैं। किसी भी समय क्रोध की एक रेखा भी आपके चेहरे पर दिखाई नहीं देती है। आपके दर्शन मात्र से ही शांतिता हृदय में आ जाती है फिर आपके प्रवचन श्रवण से तो कैसे कल्याण न होगा सोच नहीं सकते।

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'।

बचपन से ही आप वैराग्य की ओर झुके हुये थे। जल में कमल की भांति घर में बसते थे। बार बार दिमाग में आता था कि ये जो सुख सामग्री प्राप्त हो रही हैं वह सब सदैव रहने वाली नहीं हैं, क्षणभंगुर हैं।

छोटी अवस्था में ही आपका विवाह हुआ। परन्तु उस स्त्री का संसर्ग अधिक दिन तक न रह सका। २० वर्ष की आयु में ही देहान्त हो गया। आपकी इच्छा न होते हुये भी आपके घर वालों (विशेषकर स्वसुर) व गांव वालों के अधिक आग्रह करने पर आपको दूसरी शादी करानी पड़ी। परन्तु ६ वर्ष पश्चात् वह स्त्री भी आपका मार्ग निष्कंटकी बना कर चली गई। जिस समय दूसरी स्त्री का देहान्त होने वाला था उससे ५ मिनट पहले आप अपने चाचा के यहां गये और आपने वहां पर यह घोषणा कर दी कि अब आप तीसरी शादी न करायेंगे और ब्रह्मचर्य से ही रहेंगे।

स्त्री के देहान्त के बाद आपके घर वालों ने आपसे तीसरी शादी कराने के लिये बहुत आग्रह किया। परन्तु आप तो पूर्ण रूप से वैराग्य में रम चुके थे। उस समय आपने कुछ वैराग्यपूर्ण पद्य रचे जिनका संग्रह मनोहर पद्यावलि में किया गया है जिससे उनके उस समय के विचारों का सहज ज्ञान हो जाता है। साथ ही आपके छंद शास्त्र के ज्ञान का भी पता चल जाता है।

६ महीने आपने अपना आगामी मार्ग निश्चय करने में ही व्यतीत कर दिये। इस बीच में आपने अपने घर वालों और गांव वालों के

शादी के आग्रह से तंग आकर 'जैन सन्देश' में इस आशय की सूचना निकलवा दी कि "मैंने अब निश्चय कर लिया है कि तीसरी शादी न कराऊंगा और पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहूंगा। अतः कोई सज्जन अब शादी के विषय में मुझसे कोई अनुरोध न करें"। इतना करने पर भी जब आप अपने घर की व्यवस्था ठीक करने ग्राम में आये तो आप के चाचा जी और आस पास के गांव वालों ने आपके सामने फिर शादी का प्रस्ताव रखा और कहा कि वह समाचारपत्र में भेज देंगे कि आप की तो शादी करने की इच्छा न थी परन्तु बहुत आग्रह करने पर तैयार हुए हैं। परन्तु अब तो आपने अपना मार्ग निश्चय कर लिया था। आपने किसी की एक न मानी। आप २७ वर्ष की आयु में सिद्धक्षेत्र श्री शिखर जी को चल दिये और वहां जाकर परमपूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेशप्रसाद जी वर्णी के समक्ष ब्रह्मचर्य व श्रावक व्रत धारण किये।

अब तो आप सब झंझटों से छूट गये। एक ही काम रह गया। वह था सुख और शांति प्राप्त करना। सो भी ज्ञान-वृद्धि के बिना असम्भव जानकर आप ज्ञान-वृद्धि की ओर पूरे प्रयत्न से लग गये। परिणामों में दिन प्रति दिन उज्जवलता ही आती गई। एक वर्ष बाद ही २८ वर्ष की अवस्था में काशी में सप्तम प्रतिमा के व्रत आदरे।

सन् १९४४ ई० में प० गणेश प्रसाद जी वर्णी दशम् श्रावक (वर्तमान पूज्य श्री १०५ क्षुल्लक गणेश प्रसाद जी वर्णी) ईसरी से पैदल यात्रा करके सागर (सी० पी०) पधारे थे। इस वर्ष दसलाक्षण पर्व भादव मास में कुछ उत्तर प्रान्त के सज्जन सहारनपुर आदि स्थानों से पूज्य श्री वर्णी जी का उपदेशामृत पान करने के लिये सागर गये। वहां पर उक्त पूज्य श्री वर्णी जी के उपदेश तथा स्थानीय समाज के आचार विचारों से बहुत ही प्रभावित हुए। उत्तर प्रान्त को कल्याणार्थ अपने मुख्य शिष्य को भेजने के लिए पूज्य वर्णी जी से प्रार्थना की। पं० मनोहर लाल जी को ही इस कार्य के लिये उपयु

Report any errors at vikasnd@gmail.com

समझा गया। आप से प्रार्थना की। टाल न सके कोमल हृदय होने के कारण। उत्तर प्रान्त का अहोभाग्य कि आपने जून सन् १९४५ ई० में सहारनपुर पधारने की कृपा की।

आपने देखा कि संसार के प्राणी मोह में अंधे हुए अपने सच्चे स्वरूप को भूल कर दुखी हो रहे हैं। आपका कोमल हृदय तड़प उठा सहन न कर सके। आपके उपदेश से प्रभावित होकर समाज ने उत्तर प्रान्तीय दिगम्बर जैन गुरुकुल की स्थापना सहारनपुर में कर दी। (अब यह गुरुकुल उत्तर प्रान्त के केन्द्र तथा तीर्थ स्थान हस्तिनागपुर में कार्य कर रहा है) इसमें आदर्श शिक्षा प्राप्त करके आज के बच्चे ज्ञान प्राप्त कर सच्चे सुख अथवा आत्मिक सुख को प्राप्त कर सकेंगे ऐसी हमें आशा है। इतने से ही आपको चैन न मिला। आप गांव-गांव शहर-शहर घूम कर लोगों को बता रहे हैं वह सच्चा मार्ग जिस की हमको वास्तविक आवश्यकता है। सो भी बड़े ही सरल शब्दों में। "हे संसार के जीव! तूने आत्मा को भूल कर देह दृष्टि रखकर अनन्त जीवन व्यतीत किये तथापि उसके बाद भी तेरे भव भ्रमण का दुख तो ज्यों का त्यों बना ही रहा किन्तु अब आत्म-दृष्टि पूर्वक एक जीवन तो ऐसा व्यतीत कर कि जिससे भव संतति मिट जाये और सदैव के लिये दुखों से छुटकारा मिले और सच्ची शांति प्राप्त हो।" आप केवल दूसरों को ही उपदेश नहीं देते अपितु स्वयं उस मार्ग पर चल कर संसार के दुखी प्राणियों का और अपना कल्याण भी कर रहे हैं।

इसके पश्चात् आपने जबलपुर में आठवीं और फरवरी सन १९४८ ई० में बरुआसागर में नवमी प्रतिमा, दिसम्बर सन १९४८ ई० में आगरा में दसम प्रतिमा अपने गुरु पूज्य श्री वर्णी जी के समक्ष ली।

परिणामों के चढ़ने में क्या देर लगती है। बहुत ही छोटी सी वय में सम्वत् २००५ में सब के मना करने पर भी आपने श्री हस्तिनागपुर तीर्थ क्षेत्र पर पूज्य श्री वर्णी जी के ही समक्ष ११ वीं प्रतिमा धारण

http://sahjanandvarnishastra.org/

की या यूं कहिये वर्त्तमान पद ग्रहण किया।

इस छोटी सी अवस्था में इतना ज्ञान प्राप्त करने का कारण आप के ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम तो है ही परन्तु आप की गुरू भक्ति भी इसमें विशेष सहायक हुई। आपके गुरू पूज्य श्री वर्णी जी के प्रति आप का ऐसा व्यवहार है कि जिस की उपमा आज नहीं दी जा सकती। पिता–पुत्र–प्रेम से भी कहीं अधिक।

इस समय आप का चातुर्मास मुजफ्फरनगर में हो रहा है। आप की मनोहर वाणी को सुनकर हजारों स्त्री पुरुषों ने अपना कल्याण किया और निरन्तर कर रहे हैं। आपका तो वही सीधा-सादा उपदेश है "राग छोड़ो, द्वेष छोड़ो, मोह छोड़ो आप को आप पर को पर जानो और सुखी हो लो।" हर एक को आपका यही उपदेश है बिना किसी मत मतान्तर के भेद के। ब्रह्मचारी जीवा राम जी व बाल ब्रह्मचारी पवन कुमार जी भी आपके साथ रहकर अपना भी कल्याण कर रहे हैं और यहां की जनता का भी उपकार कर रहे हैं। समय २ पर सर्व श्री रतन चन्द जी मुख्तार, नेम चन्द जी वकील सहारनपुर, रिखब दास जी मेरठ व भगतराम जी 'भक्त' देहली वालों का आगमन यहां की जनता के लिये विशेष उपयोगी सिद्ध हो रहा है क्योंकि उनके आचरण से पता चलता है कि गृहस्थी में रहकर भी हम किस प्रकार अपने विचार पवित्र रख सकते हैं।

'गृहस्थी में रहकर भी हम अपने विचार पवित्र और वैराग्य पूर्ण कैसे बना सकते हैं, इस प्रश्न का उत्तर आपको 'मनोहर पद्यावलि' से मिलेगा। शान्तिपूर्वक इस पुस्तक का अध्ययन करो और सुखी हो जाओ।

प्रातःस्मरणीय श्रद्धेय श्री वर्णी जी के विशद और अनुभूतिपूर्ण

Report any errors at vikasnd@gmail.com

कविताओं से लाभ उठा सकते हैं। कौन ? जिनका संसार थोड़ा रह गया है या मोक्षाभिलाषी। हमें पूर्ण आशा है कि इस पद्यावलि से पाठकों को आध्यात्मिक-ज्ञान-जन्य शान्ति का आभास मिलेगा और उस आभास बोध से उनकी रुचि आध्यात्म-शास्त्र की ओर बढ़ेगी जो मोक्ष मार्ग की प्रथम सीढ़ी है।

जैन समाज

मुज़फ्फरनगर।

http://sahjanandvarnishastra.org/

श्री वीतरागायनमः

मनोहर-पद्यावलि

(१)

मन ध्याइये जिनपति जन रंजन,
भव भय भंजन त्रिभुवन बन्दन ॥टेक॥
शिवमग दाता शिवमग नायक,
शिव मय त्राता शिव सुख दायक ॥१॥
विश्व बुद्ध जय सुमति विधायक,
वसु विधि हर्ता विघन विनाशक ॥२॥
जनम मरण गद मद नहीं विस्मय,
आरत चिन्ता शोक जरा भय ॥३॥
शान्त 'मनोहर' मुद्रा निरुपम,
भ्रम तम भंजन चन्द्र कला सम ॥४॥
सम रस वरषण मेघ घटा सम,
शान्ति सवावन शुचि सरिता सम ॥५॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

(२)

जय जय जय जय जिनेन्द्र ॥टेक॥
सूर्य चन्द्र कल्प इन्द्र, भवन इन्द्र व्यन्तरेन्द्र,
नृप नृपेन्द्र वर मृगेन्द्र, वन्दित पद शतक इन्द्र ।
ध्यावत योगी मुनीन्द्र ॥१॥

बिन भूषण सुभग रूप, निर्भय निर्मल अनूप,
परम शांत ज्योति रूप, निर्दोषी त्रिजग भूप ।
मैटे जग मोह तन्द्र ॥२॥

'मनहर' जग जन मनहर, शिवमय शिवरमणीवर,
समसुख रस शुचि सरवर हितकर दुखहर सुखकर ।
जय जय जय जय महेन्द्र ॥३॥

(३)

पायो दुख कर्म संग ॥टेक॥
यह जड़ नाना विरूप, होत भंग मूर्त अंग,
चेतन तू एक रूप है अभंग सत अनंग ।
फिर भी ये करहिं तंग ॥१॥

इनको सँग लहत लहत दुख सुख सब सहत सहत,
चारों गति नचत फिरत, बना राव कभी रंक ।
गति लखि हो गयो दंग ॥२॥

जनत मरत बढ़त लहत, कहत भजत चलत फिरत,

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

चहत रहत सुरत करत, कुपत छलत सजत अंग ।
प्रविशत चित अंग अंग ॥३॥
'मनहर' शिव रमण चहत, अगणित सुख भजन चहत,
जगत दहन शमन चहत, तौ रच मत विषय रंग ।
विश्व वन्द्य हो विरंग ॥४॥

(४)

जिन राज के भजन में यदि प्रेम किया होता ।
संसार के दुखों का आभास नहीं होता। ॥टेक॥
सत्पात्र अतिथियों को गर दान दिया होता ।
दारिद्रय के दुखों का आगार नहीं होता ॥१॥
पंचाक्ष के विषय में वैराग्य किया होता ।
तो शील सुधा पीकर जग जीत लिया होता ॥२॥
यदि अन्य प्राणियों को नहीं कष्ट दिया होता ।
तापक वियोग दुख का आधार नहीं होता ॥३॥
अपने में आपके बल अपने को लखा होता ।
अविराम अमित दुख से तू आर्त नहीं होता ॥४॥
दुख धाम दाम परिजन पर मान लिया होता ।
मिलने व बिछुड़ने में आकुल न कभी होता ॥५॥
इकले हि जन्म लेता नहिं कोई साथ आता ।
मरता भि अकेला है नहिं कोई साथ जाता ॥६॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

इकले हि पाप बांधे नहिं कोई सांझ होता ।
इकले हि भोगता दुख नहिं कोई बांट सकता ॥७॥
संसार है न तेरा संसार का न तू है ।
विश्वास अगर होता सुख धाम बना होता ॥८॥
यदि तेरे मन 'मनोहर' भगवान बसा होता ।
कर्मों में नहीं दम जो नजरों से देख लेता ॥९॥

(५)

माया का तमाशा है, अहा अहा,
हर एक छटावो में हा.........
आशा ही निराशा है ॥माया०॥टेक॥
विषयों का विषम विष रस, रसिया हो रसा अब तक. हा......
पै प्यासा ही प्यासा है ॥माया०॥१॥
निज देश चलो चेतन, यहां कोई नहीं अपना,
ममता की नींद छोड़ो, क्यों देख रहे सपना,
झूठी ही दिलासा है ॥माया०॥२॥
उस भाव में समावो माया के इशारे पर,
मति भ्रष्ट न हो पाये ।
सुख भी तो जरा सा है अहा अहा......॥माया०॥३॥
प्रिय शांति दया समता, बस जाँय हृदय तेरे,
ईश्वर को सौंप दे मन, मिट जाँय दुःख तेरे,

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

बस ये ही दिलासा है ॥माया०॥ ॥४॥
तक रूप वह 'मनोहर', माया के नज़ारों में,
इच्छा नहीं हो तेरे,
फिर कोई न पाशा है। अहा अहा ····माया०॥५॥

(६)

जाना कर्मों का कपट छन्द। ये भोले ठग हैं दुख निकंद ॥टेक॥
विषयों के सुख का लालच दे, चेतन तेरी वे निधि हरते।
इस ही से चिर हुआ द्वन्द्व ॥ जाना०॥१॥
करत उपशमक यद्यपि उपशम, तदपि तजत नहिं ये अपनी दम।
पटक देत मिथ्यात्व फंद ॥ जाना०॥२॥
जितना चाहे विधि लालच दे, लालच में नहीं आउँ दुमते।
बस लें खल अब दिवस चंद ॥ जाना०॥३॥
कोप मदन मद तृष्णा छल डर, शोक अरति रति छोड़ 'मनोहर'।
क्यों होगा फिर कर्म बंध ॥ जाना०॥४॥

(७)

बसना सँभल सँभल कर भव वन में बसने वाले।
चलना सँभल सँभल कर जग में विचरने वाले ॥टेक॥
कर्मों का राज्य यहां पर, चेतन से वैर जिनका।
करना सँभल सँभल कर अपराध करने वाले ॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

माया का जाल फैला, विषयों के कण सजे हैं।
भजना सँभल सँभल कर, विषयों के भजने वाले ॥२॥
गृहजाल में न फसना, फसना तो बच के रहना।
फसना सँभल सँभल कर गृह जाल फसने वाले ॥३॥
अपना सा और का दिल, मानों नहीं सतावो।
हसना सँभल सँभल कर अन्याय करने वाले ॥४॥
रोने के फल में आखिर, रोना ही रोना होता।
रोना सँभल सँभल कर विपदा में रोने वाले ॥५॥
जो भाव हों मरण में, वैसा ही गति मिलेगी।
मरना सँभल सँभल कर झूठे ही मरने वाले ॥६॥
खाने को नहीं जीना, जीने के लिये खाना।
जीना सँभल 'मनोहर' दो दिन को जीने वाले ॥७॥

(८)

चेतन तुम अनन्त सुख धारी।
कर्मों की कटु चाल सोचकर, काहे चिन्ता धारी ॥चेतन०॥टेक॥
ये तो आत्म विभाव सहारे, दे सकते दुख कर्म विचारे।
मत विभाव कर तो ये हारे, सो तेरी ठकुराई ॥१॥
भेद ज्ञान को टुक प्रगटा ले, आत्म विभाव सभी विघटा ले।
फिर यें कर्म तुझे तज देगें, सो तेरी चतुराई ॥२॥
तू चेतन ये कर्म महा जड़, तू प्रकाशमय ये मिथ्यातम।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जब निज मय होगे पा लोगे, अपनी वह मधुराई ॥३॥
तन धन जन जग सर्व विराने, छोड़ 'मनोहर' होउ सयाने।
तो तोकूँ निश्चय चाहेगी, शिवरानी सुखदाई ॥४॥

(९)

कोइ भाई मुझे बतला देना जग में कोइ अमर रहा अब तक।
विषयों की आश लगाने में संतोष हुआ किसको अब तक ॥टेक॥
निर्बल निर्धन असहायन का, निर्जन अति वृद्ध व रोगिन का।
बेकार व बुद्धि विहीनन का, है साथ दिया किसने अब तक ॥१॥
धन संपति यह तन मात पिता, सुत पौत्र महल सेवक बनिता।
जिनमें जन मोह सदा करते, क्या साथ रहा किसका अब तक ॥२॥
इकला भ्रमता तू आता है, इकला जीकर मर जाता है।
भव भव जो साथ रहा उनमें, बतला क्या साथ रहा अब तक ॥३॥
यह नर भव सत्कुल जैन धर्म, शिव साधक नव पद सत्य मर्म।
दुर्लभ है 'मनोहर' न चेते, जग मांहि भ्रमोगे फिर कब तक ॥४॥

(१०)

करना हो सो करलो, फिर मरना होगा ॥टेक॥
मर्जी हो तो पुण्य कमालो, या पापों का भार बढ़ालो।
निश्चय है कर्मों का फल पाना होगा ॥करना०॥१॥
दिल में चाहे भोग बसा लो, या सर्वज्ञ हितंकर ध्यालो।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

खोटे सांचे मन का फल पाना होगा ॥करना०॥२॥
पर में मिथ्या निज रुचि भालो, या शिव पथ में रुचि प्रगटा लो।
झूठी सांची रुचि का फल पाना होगा ॥करना०॥३॥
चाहे देव शास्त्र गुरु ध्यालो, कुगुरु कुदेव कुशास्त्र मनालो।
सत्य असत ध्यानों का फल पाना होगा ॥करना०॥४॥
निंद्य कठोर अहित वच बोलो, चाहे मिष्ट सरस हित बोलो।
दुष्ट इष्ट वचनों का फल पाना होगा ॥करना०॥५॥
लिप्त रहो विष्यों में मन भर, या धारो व्रत त्याग 'मनोहर'।
अविरति व्रत करने का फल पाना होगा ॥करना०॥६॥

(११)

मन भावन मन भावन श्री मुनिवर ध्यालो रे ॥टेक॥
समता शांति समाधि भजतहै छोड़ जगत जंजाल।
सुर नर इन्द्र नरेन्द्र उरग पति नावत चरणन भाल ॥१॥
कंचन कांच बराबर माने, निन्दन बन्दन चाल।
महल मसान संपदा विपदा में, नहिं हर्ष विषाद ॥२॥
शीत समय सरिता तट ध्यावत, रंच नहीं मन खेद।
उष्ण काल संतप्त शिला पर ध्यावत स्वपर विभेद ॥३॥
वरषत मूसलधार दमकिनी, दमकत शीतल व्याल।
तब गुरु देव वृक्ष तल ध्यावत आतम देव विशाल ॥४॥
जग हित कारी आत्म पुजारी, काटत कर्म कराल।

http://sahjanandvarnishastra.org/

मन वच काय संभाल 'मनोहर', तिन पद नाओ भाल ॥५॥

(१२)

आपहि भूल फिरै, अपन को आपहि भूल फिरै ॥टेक॥
ज्यों मृग नाभि गंध अज्ञानी, बन बन धाय फिरै ।
सिंह कूप जल निज छाया लखि, तट तट फिरत गिरै ॥१॥
कपि घट में मोदक मुट्ठी नहिं, खोलन चाह करै ।
पकरै को भ्रम मान भगै, पर कर कैसे निकरै ॥२॥
तू तो ब्रह्म मगर आशा को, पाशा बांध फिरै ।
आशा तज लख रूप 'मनोहर', शिव की राह धरै ॥३॥

(१३)

भोगे तो भोग क्या हैं, भोगों ने भोगा हमको ।
इन भोग ही के कारण, कर्मों ने घेरा हमको ॥टेक॥
हम सोचते बड़ा सुख धन धाम मान जन का ।
सुख का बहाना करके छोड़ेगा पुण्य हमको ॥१॥
हम सोचते बड़े हैं इनसे उमर बड़ी है ।
कर कर बड़ा बड़ा ये खा लेगा काल हमको ॥२॥
जिस तन को सजाते हैं इतराते रूप लखकर ।
सेवायें करा कर ये छोड़ेगा देह हमको ॥३॥
पितु मात भ्रात नारी सुत संपदा भि सारी ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

मोही बना बना सब छोड़ेंगे कभी हमको ॥४॥
तन जन चमन खजाने साथी न हों 'मनोहर' ।
इक धर्म ही हितू जो होगा सहाय हमको ॥५॥

(१४)

है काम नाम में देव लगाया किसने ।
ये तो प्रधान उनमें हिंसक हैं जितने ॥टेक॥
ये जीव रूप मछली पर संकट डारे ।
जिन धर्म उदधि से बाहिर फैंक निकारे ।
नारी तन पल के काँटे पर लटकावें ।
संभोग भाड़ में बारहिं बार भुजावें ॥१॥
जैसे कोई बैरी मंत्र प्रयोग चलावे ।
तो नेत्र घुमे दिल भ्रमे भूमि गिर जावे ॥
त्यों काम शत्रु के मंत्र वशी दुख पावे ।
पावें विपदायें निज विज्ञान गमावे ॥२॥
यें ठगियों का शिर मौर जाल फैलावे ।
संगीत सुना तन रूप दिखा ललचावे ॥
डाकू भी पक्का जग कू ये डरपावे ।
ब्रह्मा महेश से ऋषि का ज्ञान लुटावे ॥३॥
जिस काम दुष्ट से जग व्याकुलता पावे ।
उसके विनाश का मार्ग गुरू बतलावे ॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

चिद्रूप 'मनोहर' जो अपना लख जावे।
वो काम शत्रु का शत्रु सुभट बन जावे ॥४॥

(१५)

रोवत काय फिरै, अरे मन रोवत काय फिरै ॥टेक॥
पुण्य विपाक विषय सुख ललचा नाना केलि करे।
पाप उदै दुख होत न्याय है फिर क्यों शोक करे ॥१॥
कहत रहत निश वासर सुख कम दुख जग मांही खरे।
जो कहते थे सोई भयो क्यों अनहोनी उचरे ॥२॥
पर समझावन बनत सयाने पंडित शील भरे।
वह चतुराई कहां गई अब काहे विपत डरे ॥३॥
रुदन हास तेरो कर्तब नहिं क्यों भ्रम मान मरे।
जो तू ब्रह्म ब्रह्म सो तू है निश्चय नय विहरे ॥४॥
ज्यों गजराज शौर्य श्रद्धा लख निश्चय नय विहरे।
निज अनंत बल सोच 'मनोहर' निज विश्राम करे ॥५॥

(१६)

धर्म के खातिर सहज कुर्बान होना सीख लो।
प्राण जायें जाँय पर शिवमार्ग पाना सीख लो ॥टेक॥
अकलंक औ निकलंक कैसे साहसी ज्ञानी हुए।
वीर वर निकलंक सा बलिदान होना सीख लो ॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

स्याल तन भखते गये पर ध्यान को छोड़ा नहीं।
धीर वर सुकुमाल मुनि सा धीर बनना सीख लो ॥२॥
लोहमय संतप्त भूषण दुष्ट पहिनाते गये।
थिर रहे पांडव यथा थिर चित्त होना सीख लो ॥३॥
ज्ञान दर्शन प्राण तेरे सो न जा सकते कहीं।
हो अभय अनुभव मधुर रस स्वाद लेना सीख लो ॥४॥
इन्द्रियों को प्राण माने ये सदा मिलती रहीं।
धर्म ही दुर्लभ 'मनोहर' धर्म करना सीख लो ॥५॥

(१७) [पूर्व रचित]

अचल अमल दृग ज्ञान सुख बल अनन्त के ईश।
परम धरम वक्ता नमूं हस्त जोड़ धर शीश ॥१॥
चाहूं नहिं धन सम्पदा चाहूं नहिं सन्मान।
चाहूं नहिं संसार सुख चाहूं आतम ज्ञान ॥२॥
चाहूं नहीं सम्पदा भूरि होवे, चाहूं नहीं पौत्र सुतादि होवे।
चाहूं नहीं क्लेश न पास आवे, चाहूं नहीं विष्टप कीर्त्ति गावें ॥३॥
चाहूं नहीं मान बड़ाई होवे, चाहूं नहीं लौकिक सौख्य होवे।
चाहूं नहीं इन्द्र प्रतीन्द्र होऊं, चाहूं नहीं राज्य विशाल जोऊं ॥४॥
चाहूं नहीं चक्र गदादि पाऊं, चाहूं नहीं सुन्दर नार पाऊं।
चाहूं नहीं पुण्य उपार्जना हो, चाहूं नहीं वित्त प्रसारणा हो ॥५॥
चाहूं नहीं लोक विशाल माने, चाहूं नहीं बुद्धि विशिष्ट जाने।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

चाहूं नहीं मर्त्य आमर्त्य ईशा, चाहूं नहीं होउँ राजा फणीशा ॥६॥
चाहूं नहीं अष्टक ऋद्धि होवे, चाहूं नहीं सर्वक सिद्धि होवे।
चाहूं नहीं लोक वशी हो मेरे, चाहूं नहीं लौकिक पाऊं फेरे ॥७॥
चाहूं यही आतम शुद्ध होवे, चाहूं यही राग न लेश होवे।
चाहूं यही ज्ञान विशिष्ट होऊं, चाहूं यही कर्म विमुक्त होऊं ॥८॥
चाहत हूं निज महा गुण, नहिं चाहूं कुछ और।
कहत 'मनोहर' स्वल्पमति, करदो आत्म ठौर ॥९॥

(१८) [पूर्व रचित]

कर्म की चाल बड़ी न्यारी,
नारायण लक्ष्मण को रावण ने शक्ति मारी।
चकित हो गये सब नरनारी,
कर्मन का है चक्र कठिन इसके वश संसारी ॥टेक॥
यदपि मृत्यु लक्ष्मण के द्वारा रावण की गाई।
होनहार घट सके न तिल भर बढ़े न पल राई॥
लक्ष्मण को मूर्छा आई॥
रामचन्द्र बलभद्र विलापे हा लक्ष्मण भाई ॥१॥
धन्य विशल्या महा पुण्यवंती विमान आई।
उनके परसित जल स्पर्श से शक्ति गई भागी॥
विशल्या लक्ष्मण ने ब्याही॥
फिर रावण के सन्मुख होकर किया युद्ध जारी ॥२॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

रावण ने लक्ष्मण के वध को चक्र रत्न ध्याया ।
दे प्रदक्षिणा तीन हाथ नारायण के आया ।।
देव जयकार करें भारी ।।
सुर सहस्र हैं जिसके रक्षक तिसके अधिकारी ।।३।।
लक्ष्मण ने उस चक्र रत्न से रावण को मारा ।
सीता जी का संकट टाला वही हर्ष धारा ।।
हर्ष सुरनर खग को भारी ।।
दयावंत, गुणवंत, संत भये सब के अधिकारी ।।४।।
पुण्य पाप के उदय जीव ये सुख दुख को पावे ।
जान 'मनोहर' पुण्य पाप फल धर्म हृदय लावे ।।
नमूं जिन पाई शिवनारी ।।
अनुपम ज्ञान शक्ति दर्शन सुख के प्रभु भंडारी ।।५।।

(१६)

प्यारी विपदाओ आओ ।
रति निद्रा में सोये जन को बारंबार जगावो ।।टेक।।
संपति को छल जान न पायो याने बहुत रुलायो ।
आशहिं आशहिं ज्ञान गमायो आशहिं आश ठमायो ।।१।।
करुणा तेरी पाकर पांडव कर्म हिं मजा चखायो ।
गज कुमार से बहुते जन को तूने शिव पहुंचायो ।।२।।
आश करी संपति की अब तक टुकड़ा नेक न पायो ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

आशा तेरी सुखद 'मनोहर' के मन यही समायो ॥३॥

(२०)

अपनी भूल सो धोखा खावे। पर को व्यर्थ हि नाम लगावे ॥टेक॥
तृष्णा को दुखदाई मान गर तू नहिं नेह दिखावे ।
क्या धन में क्या परिजन में दम तोकूं आन सतावे ॥१॥
तू तू ही पर पर ही समझे और विकल्प न लावे ।
क्रोध मान माया जबरन फिर कैसे तोहि फंसावे ॥२॥
नित्यानंद प्रदेश देश तव तद्गुण परिजन ध्यावे ।
निश्चय जान 'मनोहर' कबहूं आकुलता नहिं आवे ॥३॥

(२१)

सद्गुरु बार २ समझावे, पै तू हित उपदेश न भावे ॥टेक॥
राग आग की ज्वाला से जल, बना रहा अब तक तू व्याकुल ।
राग तजो, त्याग भजो, नित्यानन्द स्वराज्य सजो,
मन परवशता मिट जावे ॥१॥
जग वैभव है कपट नजारे, भव बन में भटकावन हारे ।
लोभ तजो, तोष भजो, निर्विकल्प विज्ञान सजो,
मन परवशता मिट जावे ॥२॥
राग लोभ दो दुर्गुण छूटे, कामादिक की संतति टूटे ।
आर्ति तजो, शांति भजो, पाले अविचल राज्य 'मनोहर,
परवशता मिट जावे ॥३॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

(२२)

सांचो कौन धर्म हम जाने । जो जिस कुल उत्पन्न भये वे,
कीरति ताहि बखाने ।।टेक।।

बौद्ध शैव वेदान्ति भाट जेमिनि मीमांसक यौगा ।
स्वमत तत्त्व आचरण बतावे, किसकी सरधा जोगा ।
किसकूं हम दुखहारी माने ।।१।।

जो खुद को प्रतिकूल जचे, नहिं काहू पे अजमावे ।
यही कसोटी कर्त्तव्यों का सार असार बतावे ।
फिर क्यों व्यर्थ विवाद समाने ।।२।।

तनिक क्लेश में दुखित होंय हम क्यों पर कूं उपजावे ।
पर को झूठ कुशील बुरो लखि कैसे चित्त लगावे ।
फिर क्यों जानि रहे भरमाने ।।३।।

पर को राग द्वेष भारी लखि भोंदू ताहि बतावे ।
राग द्वेष के सेवक फिर हम क्यों भोंदू न कहावे ।
अपनी भूलहिं हम दुख ठाने ।।४।।

जो पर को संहार न चाहे विषय कषाय न भावे ।
ऐसे ही निर्दोष देव का ध्यान विपत्ति मिटावे ।
उनकी भक्ति न क्यों हम राने ।।५।।

इच्छा ही दुख जग विपदा का मूल निदान प्रमाने ।
उसी भूल के नाश अर्थ निज ध्यान 'मनोहर' ठाने ।
सांचो यही धर्म सरधाने ।।६।।

http://sahjanandvarnishastra.org/

(२३)

पागल हो गये कविराज ।

अशुचि तन को चन्द्र मुखि कहते न आई लाज ॥टेक॥

देह क्या है मूत्र विष्टा कीट का घर द्वार ।

मांस पिंड उरोज कूं दें हेम घट उनहार ॥१॥

थूक को संवास कुंतल जिन्हें दें सन्मान ।

अशुचि घर के थंभ जंघाहिं कहत केर समान ॥२॥

एक तो स्वयमेव अंधा जगत जीव समाज ।

आंख में फिर राग धूली डालते किह काज ॥३॥

मोहियों के मित्र बन फिर कबहुं द्यो सुलझाय ।

सत्य कवि नहिं तो 'मनोहर' रटेगा यह गाय ॥४॥

(२४)

मन विषयनि मत ललचावे ।

इनही के कारण भव भव में जग आकुलता पावे ॥टेक॥

मान करी खांडे को करिणी, गिरे गर्त में कामी व्यसनी ।

बाधत व्याध निगड़ नत चलनी, भरत दासता तव सुख दलिनी ।

जननेन्द्रिय के विषय चाह में अपने प्राण गमावे ॥१॥

मीन मास के स्वाद चाह में, कंठ फसावत लौह फांस में ।

दुखी होय धीवर के वश में, बहु व्याकुल हो निर्जन थल में ।

रसनेन्द्रिय के विषय चाह में अपने प्राण गमावे ॥२॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

सुरभि गंध का लोभी षट् पद, मीलित नीरज में सह आपद ।
जिहि खा जाते बनचर चौपद, पै नहिं छेद भगे नीरज छद ।
घ्राणेन्द्रिय के विषय भोग में अपने प्राण गमावे ॥३॥
दीप ज्योति के तीव्र लोभ में, पतत पतंगा पवन मित्र में ।
आकुल व्याकुल होय निधन में,भस्म करे निज तन इक छिन में ।
नेत्रेन्द्रिय के विषय भोग में अपने प्राण गमावे ॥४॥
सरस मधुर संगीत श्रवण में, मृग पकड़ा जावे कानन में ।
पड़ता हिंसक के बन्धन में, दारुण दुख भोगे जीवन में ।
कर्णेन्द्रिय के विषय चाह में, अपने प्राण गमावे ॥५॥
इक इक इन्द्रिय विषय चाह में, प्राण गमाये हैं जीवों ने ।
जब नर तू पांचों के वश में, कैसे हित पावे जीवन में ।
वीर 'मनोहर' वही विषय की पाश छेद सुख पावे ॥६॥

(२५)

दोहाः- पर तू हो सकता नहीं, तू न कभी पर होय ।
तेरा पर पर का न तू क्यों पर को तू रोय ॥
छन्दः- मेरा मेरा मानना ही तो तिहारी भूल है ।
बस यही ही भूल तेरी वेदना का मूल है ।।टेक।।
तेरा कुछ था है न होगा व्यर्थ क्यों ललचा रहा ।
लालसामय शल्य ही तो बन रहा तिरसूल है ॥१॥

Version 1

तूने जिनको देखा अब तक क्या सभी जिन्दा रहे ।
देखते हो फिर पड़ी क्यों तेरी मति पर धूल है ॥२॥
खैर जब बेहोश था अब ज्ञान का उपयोग कर ।
इस कुमति से प्रीति तोड़ो तो सुमति अनुकूल है ॥३॥
तात बान्धव नार सुत क्या मित्रजन क्या संपदा ।
पाप का संकेत लखि बन जाय सब प्रतिकूल है ॥४॥
पाप के फल में कभी दाना किसी ने साथ है ।
तू शरण तेरा 'मनोहर' और सारी भूल है ॥५॥

(२६)

अपनो दुख किसे बतलाँय ।
हाथ को हैं बांस भैया होत कौन सहाय ॥टेक॥
धन स्वजन घर सब कछ हैं, खूब है व्यापार ।
पै न जाने दिल विकल क्यों चैन है न लगार ॥१॥
सोचता हूं साज सुख का मिला आज समाज ।
क्या सदा साथी रहेगा मेरा मन का राज ॥२॥
कौन पहिले बिछुड़ जैहैं मैं व ये सुख साज ।
किस तरह दुखिया बनै है मोह खल सिरताज ॥३॥
दिल विकल इस सोच में है सत्य कौन उपाय ।
कौन का शरणा गहूं चिन्ता कहां नश जाय ॥४॥
और की तो क्या कहानी जब अथिर यह काय ।

तुम तुम्हीं के शरण तुम ही में बसे सदुपाय ॥५॥
शिव निराकुल ज्ञान चेतन आप में मति धार ।
भिन्न सब जानो 'मनोहर' होयगें दुख छार ॥६॥

(२७)

हे कर्म तेरी लीला निराली है ॥टेक॥
रामचन्द्र राजा दशरथ के प्रणों से भी प्यारे थे ।
तेरी तिरछी नज़र हुई तो बन के बने दुलारे थे ।
सीता हरी गई जब बन में हुए बहुत मतवाले थे ।
रावण की शक्ती से लक्ष्मण भये बेहोश विचारे थे ।
सीधी नज़र भई जब कर्मों का लंका लो राज्य भयो ॥१॥
धर्म राज बलवान धनुर्धारी न्यायी पांडव अभिराम ।
तेरी तिरछी नज़र हुई तो भटके बन बन तज आराम ।
कांटे कंकण चुभने के दुख भूरि सहे तहँ द्रौपदि ने ।
भूख प्यास सर्दी गर्मी की सही वेदना तब सब ने ।
सीधी नज़र भई जब कर्मों की सर्व साम्राज्य भयो ॥२॥
कामदेव श्रीपाल भूप जिन में बल सम कोटी भट के ।
तेरी तिरछी नज़र हुई तो कुष्ठी बन बन बन भटके ।
हाथ गले पग गले अंग से रुधिर राध टप टप टपके ।
कुपित भूप ने ब्याह दिया पुत्री को था दुखिया लख के ।
सीधी नज़र भई जब कर्मों की कंचन रूप भयो ॥३॥

http://sahjanandvarnishastra.org/

गद्दी पै बैठ कोई करते आराम, दीन,
दिन भर जब काम करें पेट भर पाते हैं ।
कोई रेल मोटर स्पेशल हवाई यान,
सैर करत कोई शिर बोझ लाद जाते हैं ।
कोई जन हसत कोई रोवत सिर पटक पटक,
कोई दग़ा देते हैं कोई दग़ा खाते हैं ।
कोई नर कलह करत कोलाहल केलि करत,
कोई नर हुक्म देत कोई दंड पाते हैं ॥४॥
कभी सुखी नर कभी दुखी हो कभी वियोगी योगी हो ।
मान करे अपमान सहे बहु कभी निरोगी रोगी हो ।
परधन छीन चतुर कहलावे चुगल बनें खल पापी हो ।
कर्म चक्र चक्कर में फंस कर नाना विधि संतापी हो ।
जो बच गये कर्मों से 'मनोहर' के मन वास करे ॥५॥

(२८)

ओ जगवासी, अब एक बार, दे दो मन, ईश्वर भक्ती में ।
यह भव पाशी, रति अरति टार, छेदो मन रुचिकर मुक्ती में ॥टेक॥
सुत बन्धु नार, सम्पति अपार, बहु कारबार मिले बार बार ।
ओ अभिलाषी, इच्छायें टार, दे दो मन ईश्वर भक्ती में ॥१॥
यह जग असार, दुख जलधि छार, दुख सहत लार, तू निर्विकार ।
ओ अविनाशी, शंकायें टार, दे दो मन ईश्वर भक्ती में ॥२॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

मिथ्या विचार, 'मनहर' निवार, अन्तर निहार, शिवमग विहार ।
हो शिव वासी वसु विधि निवार, सुख लह अपार निज मुक्ती में ॥३॥

(२९)

शिवपथ की ओर चलदे दुखड़े सहोगे कब तक ।
सोये अनादि से हो सोवोगे और कब तक ॥टेक॥
जग में न इष्ट कोई विरहाग्नि में जले मत ।
रोये अनादि से हो रोवोगे और कब तक ॥१॥
नहिं हैं अनिष्ट कोई, भूठे हैं ख्याल तेरे ।
माना अनादि से है मानोगे और कब तक ॥२॥
तन रोग वेदना क्या निज भाव ज्ञान का है ।
तड़फे अनादि से हो तड़फोगे और कब तक ॥३॥
संसार है अहितमय तिल मात्र भी नहीं सुख ।
चाहा अनादि से है चाहोगे और कब तक ॥४॥
यह आर्त्तध्यान पहुंचा देता नरक 'मनोहर' ।
दुखिया अनादि से हो होवोगे और कब तक ॥५॥

(३०)

न जाना आपको भगवन हमारी भूल थी भारी ।
मगर तुम जानते थे दास को करुणा न क्यों धारी ॥टेक॥
जिन्होंने आपका शरणा लिया भव सिंधु तिर तिर गये ।

http://sahjanandvarnishastra.org/

न चूको दुख बचाने से हमारी आज है बारी ॥१॥
मैं दोषी हूं मगर तुमने अधम से भी अधम तारे ।
न चाहूं इन्द्र की संपति मुझे तो मुक्ति है प्यारी ॥२॥
न मेरा मन जगत में है यहां तो मतलबी दुनियां ।
तुम्हें मन दे चुका चाहे रुलाओ सुध लो या मेरी ॥३॥
न जाऊं पास औरों के तुम्हीं में मन बसा मेरा ।
मरूं जीऊं रहूं कुछ भी मुझे तो आश है भारी ॥४॥
तनिक भी दर्श दे जावो न औगुन लख 'मनोहर' के ।
तुम्हारा क्या बिगड़ता है मुझे संपति मिले भारी ॥५॥

(३१)

रे मन राख मन समझाय ॥टेक॥
सकल प्राण मत विकल होन दे दुर्लभ यह नर काय ।
नर भव पाकर धर्म कमावो क्यों मन में पछताय ॥१॥
तुम जानत हम ही पर आपद आपद सब पर होय ।
आपद के इस लोक में आपद का क्षय कैसे होय ॥२॥
कोई पैदा होत मरत कोइ बालापन मर जाय ।
जीने का क्षण नहीं भरोसा नशे अथिर यह काय ॥३॥
अथिर अशुचि तन में भी रह थिर शुचि समकित उपजाय ।
करो 'मनोहर' झट चतुराई सांचा बणिज उपाय ॥४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

(३२)

मेरी चुगली श्री जिनराज से किसने की है ।
मोह बैरी की शरारत ही मुझे दिखती है ॥टेक॥
ढूंढते ढूंढते जिनराज को अब लख पाया ।
देखूं उस मोह की अब शान कहां रहती है ॥१॥
नाथ उस मोह ने है झूठ भिड़ाया तुमको ।
शक्ति के रूप में मम ज्योति बनी रहती है ॥२॥
पहिले तुमको भी इसी रीति सताया इसने ।
इसके आदत की कभी खोट नहीं हटती है ॥३॥
मोह मर्दन के लिये सर्व समागम पाया ।
नाथ ! सद्भक्ति तिहारी ही रही कमती है ॥४॥
देव तुम ही में रहे भक्ति घड़ी पल निश दिन ।
तो 'मनोहर' को न डर मोह का इक रत्ती है ॥५॥

(३३)

मिटाना चाहो तो जिनवर हमारे दुख मिटा देना ।
तिराना चाहो तो जिनवर भवोदधि से तिरा देना ॥टेक॥
न हिम्मत व्रत तप करने की न समझूं तत्व की चर्चा ।
फकत समझूं तुम्हीं साँचे तुम्हारा जाप जप लेना ॥१॥
न कोई पार भव जल का व साधन तिरने के ऊंचे ।
न अपने बल तिर सक्ता हूं तिरावो तो तिरा देना ॥२॥

Version 1

बिना व्रत संयम गुप्ती के न तिर सकता मैंने माना ।
मगर वह शक्ति तुम देते तिरावो तो तिरा देना ॥३॥
रटूंगा नाम तेरा तो उबारोगे न फिर कब तक ।
मुझे विश्वास है पूरा बचावो तो बचा लेना ॥४॥
'मनोहर' के दुख के हर्ता, तुम्हीं हो त्रिभुवन के स्वामी ।
हरा कर्मों ने मेरा धन दिलावो तो दिला देना ॥५॥

(३४)

अब के ऐसी दिवाली मनाऊं । कबहूं फेर न दुखड़ा पाऊं ॥टेक॥
ज्ञान रतन के दीप में तप का, तैल पवित्र भराऊं ।
अनुभव ज्योति जगा के मिथ्या, अन्धकार विनशाऊं ।
जासों शिव की गैल निहारूं ॥१॥
निज अनुभूति महा लक्ष्मी का वास हृदय करवाऊं ।
निज गुण लाभ दोष टोटे का लेखा ठीक लगाऊं ।
जासों फेर न टोटा पाऊं ॥२॥
आन कुदेव कुरीति छांड के श्री महावीर चितारूं ।
राग द्वेष का मैल जलाकर उज्ज्वल ज्योति जगाऊं ।
अपनी मुक्ति तिया हर्षाऊं ॥३॥
अष्ट कर्म का फोड़ फटाका विजयी जिन कहलाऊं ।
शुद्ध बुद्ध सुख कंद 'मनोहर' शील स्वभाव लखाऊं ।
जासों शिव गौरी विलसाऊं ॥४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

(३५)

ओ माया वाले, माया पै मत मरना ॥टेक॥
दो दिन की ये माया रानी, क्षण क्षण क्षण क्षण होत विरानी ।
गणिका से भी अधिक सयानी, क्या मन में ललचाना ॥१॥
औरों का दिल दुख न जाये, मान हृदय में वस न जाये ।
भोगों में मन मत तड़फाये, दुष्टों का सँग तजना ॥२॥
दो दिन की यह संपति सारी, फिर ज्यों का त्यों दीन दुखारी ।
फिर भी सुख कम दुख है भारी, मत होना मस्ताना ॥३॥
ज्ञान तिहारा बिगड़ न जाये, बिगड़ बिगड़ कर विघट न जाये ।
माया के फन्दे मत जाये, तेरा ज्ञान खजाना ॥४॥
इक दिन यह माया खो लोगे, बट्टे में पापी बन लोगे ।
नर्क वास के दुख भोगोगे, क्लेश जहाँ है नाना ॥५॥
माया पाकर धर्म कमावो, दुखियों का दुख दर्द मिटावो ।
पापों का मत भार बढ़ावो, मान 'मनोहर' कहना ॥६॥

(३६)

मेरा मन बेकरार ॥टेक॥
परिजन पर प्रकट दिखत, विधि फल नित चखत रहत ।
अपनि अपनि विपति सहत, होता नहिं कोई लार ॥१॥
सुख तिल भर सुनत रहत, पर्वत सम विपत दिखत ।
दिवस उभय जियत मरत, किन सों मैं करूं रार ॥२॥

http://sahjanandvarnishastra.org/

'मनहर' भज शरण धरम, जिनवर सम सुरस सदन ।
अतन अमल वसु गुण धन, मुनिवर जग तिमिर हरण,
यही चार सर्व सार ॥३॥

(३७)

मन की बात मनहिं जानत है । हांस करन को सब जग बैठो,
सांची को मानत है ॥टेक॥
धन संपति घर बांधव नारी में नहिं मन पागत है ।
जामें मन पाग्यो यदि कहदूँ सब जन मूठ कहत हैं ।
घर को खोज मिटौ मानत है ॥१॥
संयम सो अनुरागूं तो नर कुल की हानि कहत है ।
पर सो लिपटूं तो नरभव का फेर न लाभ मिलत है ।
सुख भी रंच नहीं दीखत है ॥२॥
करो 'मनोहर' जो करना हो निश दिन आयु घटत है ।
पर की बातों में क्यों आते दो दिन सब जीवत है ।
फिर नहीं यो अवसर पावत है ॥३॥

(३८)

दुनियां के सब महिमान रिझाऊं किसे प्रेम से ॥टेक॥
जीने का फल मर जाना, फिर समय न वापिस आना,
कब जाना, क्या पाना, होगें सब वीराना ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

क्यों नचूं बन कर दिवाने, लालसावों के इशारे, इशारे ॥१॥
विपदायें आती जाती, अपना पौरुष दिखलाती,
मदमाती, इतराती, संपति को विनशाती ।
क्यों सुखी दुखिया बनूं मैं, कल्पना के सब नज़ारे, नज़ारे ॥२॥
आशा में करता वासा, पर प्यासा ही का प्यासा,
अभिलाषा, यह पाशा, देती दुख ये आशा ।
क्यों बनूं इसका भिखारी, जो भिखारी वे दुखारे, दुखारे ॥३॥
सब ही का दिल अपना सा, है जग में सुख कितना सा,
सपना सा, आभासा, फिर फिर होत निराशा ।
अब 'मनोहर' मन मनाले, वीर वाणी के सहारे, सहारे ॥४॥

(३९)

खेल ले ऐसी होरी । मिले सुख संपति तोरी ॥टेक॥
अष्ट कर्म ईंधन संचय में तप की अग्नि लगाओ ।
शुक्ल ध्यान की पवन चलाकर ऊंची ज्वाल बढ़ाओ ।
हो प्रकाश चहुं ओरी ॥१॥
निश्चय चरित सुधा सरसा कर सारी भस्म बहावो ।
निज परिणाम थान निर्मल कर सुषमा सर्व सजावो ।
हो प्रसन्न शिवगौरी ॥२॥
साधर्मी जन सांचे परिजन तिन में प्रीति बढ़ाओ ।
फैंक प्रमोद गुलाल ज्ञान से निज पर अंग रंगाओ ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

नमों जिन शिव रति जोरी ॥३॥
आतम अनुभव भोजन रचकर खावो और खिलावो ।
नित्यानंद अमंद 'मनोहर' सार अमर पद पावो ।
रमे चित मंगल ओरी ॥४॥

(४०)

चेतन अपनो रूप निहार ॥४॥
विषय कषाय घोर दुखदाई, समरस अविनश्वर सुखदाई ।
एक विवेक तराजू लेकर इनका अन्तर तार ॥१॥
मिलत अनेक पथिक तरु के तट, रहत क्षणेक बिछुड़ते हैं झट ।
त्यों जग जीव बसत संग कुछ दिन, मरते अपनी बार ॥२॥
पर के काज विकट दुख सहता, पाप बांध उनका मन भरता ।
निजकृत पाप उदय फल भोगे, होगा कोइ न लार ॥३॥
तू विद्येश अकाम सनातन, जन्म मरण से रहित सुपावन ।
तू अनन्त सुख का सागर जब, न हो मोह की रार ॥४॥
दुख की खान मोह है भाई, समता अचल परम सुखदाई ।
बनो 'मनोहर' समरस स्वामी, तज करि सब तकरार ॥५॥

(४१)

ज्ञान नर काहे नाहिं करे ॥टेक॥
ज्ञान बिना नहिं कोटि महा तप आतम शुद्ध करे ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

ज्ञान बिना किरिया सब झूठी ज्ञानहिं गुण प्रसरे ॥१॥
चेतन तू जड़ पुद्गलादि है इनमें मोह करे ।
देह विनाशी तू अविनाशी पर निज मति पकरे ॥२॥
माया क्रोध लोभ मद कारण पावे क्लेश खरे ।
भोगे बार बार भोगादिक फिर भी चाह करे ॥३॥
पाये दुख सो भोग लिये अब चित्त विवेक धरे ।
जानो रूप विभेद 'मनोहर' तातें काज सरे ॥४॥

(४२)

कहाँ तूने ऐसो वेश बनायो ॥टेक॥
नरक निगोदन पशु योनिन में बार बार भटकायो ।
मनुज स्वर्ग सब में भ्रम आयो सम्यक् ज्ञान न पायो ॥१॥
तू अनन्त गुण का सागर है दोष कहां ते लायो ।
पर पद प्रीति रीति रस डूबे सत्य विवेक न पायो ॥२॥
समता शांति परम अमृत रस जो निज परिणति गायो ।
दूर रहा अज्ञान धारि तू विषयन में नित धायो ॥३॥
राग द्वेष तज अब सम रस के परम रसिक हो जावो ।
देख 'मनोहर' साथ न जै कुछ अरु कुछ संग न लायो ॥४॥

(४३)

भाई ज्ञान नयन को खोलो, यह झूठा सब व्यवहारा ॥टेक॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

मेरा तन ये मेरा धन है, तात पुत्र वनितादि कुटुम है ।
महल राज्य बहु सेवक गण हैं, मिथ्या मत ये तेरा ॥१॥
अन्त समय जब आ जाता है, पड़ा ठाठ सब रह जाता है ।
आया साथ न फिर जाता है, जाय न तन भी तेरा ॥२॥
निर्धन धन से हीन दुखी हैं, तृष्णावश धनवान दुखी हैं ।
जग में जीव न कोई सुखी है, सुखी सिर्फ ऋषिराजा ॥३॥
सुख में साथ सभी नर करते, स्वारथ वश ही प्रेम उमड़ते ।
विपदा काल विमुख सब होते, स्वारथ का संसारा ॥४॥
चेतो मोह नींद अब छोड़ो, नाता सिर्फ धर्म से जोड़ो ।
जग जंजाल 'मनोहर' तोड़ो, धर्म सदा रखवारा ॥५॥

(४४)

बारह व्रत श्रावक के पालो बिन व्रत पशु सम जीना है ।
पाले व्रत श्रावक के जिनने मुक्ति रमा को चीना है ॥टेक॥
पंच अणुव्रत सप्त शील ये बारह व्रत हैं सुखदाई ।
तिनके प्रथक् प्रथक् अब वर्णन सुनो भव्य दे चित्त लाई ॥
प्रथम अहिंसा अणुव्रत पालो, त्रस हिंसा का त्याग करो ।
बिना प्रयोजन स्थावर का भी नहीं कभी विध्वंस करो ॥१॥
हित मित वचन मधुर नित बोलो, अहित वचन का त्याग करो ।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द का कभी नहीं उपयोग करो ॥
बिना दिये रक्खी या भूली अन्य वस्तु मत ग्रहण करो ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

परनारी पर पुरुष देह में रंच मात्र नहिं नेह करो ॥२॥
खेत मकान सुवर्ण दाम भोजन सब का परिमाण करो।
मर्यादा से हीन रहे तो भी न कभी संक्लेश करो ॥
पर वैभव लख चाह करो मत विस्मय का नहिं भाव करो।
पीकर के संतोष सुधारस आकुलता का ताप हरो ॥३॥
दिग्व्रत देश अनर्थदण्डव्रत यें तीनों गुणव्रत भाई।
तिनके प्रथक् प्रथक् अब वर्णन सुनो भव्य दे चित्तलाई ॥
आजीवन कछु देश क्षेत्र की अवधी ले व्यवहार करो।
वाह्य क्षेत्र में पत्री तक से भी न ज़रा सम्बन्ध करो ॥४॥
वर्ष मास दिन घड़ी पक्ष तक क्षेत्रों की मर्यादा लो।
ले मर्यादा वाह्य क्षेत्र में जाने का परिहार करो ॥
करो पाप उपदेश कभी नहिं हिंसा के हथियार न दो।
गर कोई हिंसक मांगे केवल मिष्ट वचन कह विदा करो ॥५॥
नहीं विचारो किसी जीव को किसी तरह की हानी हो।
सुनो नहीं जो हिंसा कारक पुण्य विनाशक वानी हो ॥
हिंसक जीव न पालो बिन मतलब न कभी कछु कार्य करो।
जैन मार्ग अनुसार प्रवर्त्तो दुष्ट कर्म का नाश करो ॥६॥
सामायिक प्रोषध अनशन उपभोग भोग का नियम तथा।
अतिथि दान ये चौ शिक्षाव्रत कहूं कही मुनि नाथ यथा ॥
सुबह दुपर सन्ध्या की बेला सामायिक से ध्यान करो।
एकाशन उपवास अष्टमी चतुर्दशी के दिवस करो ॥७॥

Version 1

भोजन वाहन वस्त्रादिक की मर्यादा जितनी कर लो ।
उतने ही में काम चलाकर तृष्णा खाईं से बच लो ॥
मुनि श्रावक आर्यिका श्राविका का समुचित सत्कार करो ।
औषधि शास्त्र आहार दान दो विपदा का परिहार करो ॥८॥
रोगी, दुखी, दीन, विधवायें, अरु अनाथ पर दया करो ।
भीत जीव को शरण देकर अभय दान से तुष्ट करो ॥
इन व्रत का फल स्वर्ग विभव है, परम्परा से मुक्ति लहैं ।
कहैं 'मनोहर' सौख्य हेत भवि जीव धर्म को नित्य गहैं ॥९॥

(४५)

हरेंगे, वें नर कैसे कर्म हरेंगे ॥टेक॥
दुःख पड़े सब सुध आवत है ये ये पुण्य करेंगे ।
दुःख गये फिर विसर जात सब मानों सुखहिं रहेंगे ।
वे नर क्या गंभीर बनेंगे ॥१॥
तप व्रत में दुख मान संपदा परिजन में लिपटेंगे ।
इष्ट नष्ट हो जाये तो रो रो अन्धे होय मरेंगे ।
वे नर कैसे धीर बनेंगे ॥२॥
पर की संपति देख मरें या आशहि आस करेंगे ।
चाहे कोई मरे या जीवे मतलब सिद्ध करेंगे ।
वे नर क्या पर पीर हरेंगे ॥३॥
होवे आश विनाश 'मनोहर' ता संतोष करेंगे ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

नहिं तो ज्यों दुख भोगत आये वैसे दुःख रहेंगे ।
वे नर क्या सुख सीर भरेंगे ॥४॥

(४६)

चेतन कुमति की रति टाल ।
कुमति पर तिय दास को है यह जगत जंजाल ॥टेक॥
जनक मोह व मात माया की सुता विकराल ।
व्यसन इसके सात भाई कुटिल जिनकी चाल ।
पांचो पाप हैं रखवाल ॥१॥
क्रोध मद छल राग लालच काम इसके लाल ।
अरति रति ईर्ष्या कुसंगति सखिन का बहु जाल ।
जिनकी बात में विष प्याल ॥२॥
पाश बन्धन में चतुर अरु यार इसका काल ।
काल के मन आय जब तब करत भाल में साल ।
गिनता ज्ञान, वृद्ध न बाल ॥३॥
तनिक नैन के सैन से दे कर्म फन्द विशाल ।
हरै तुव धन करै निर्बल देय क्लेश विशाल ।
क्यों नहिं करत अपनो ख्याल ॥४॥
कहत चेतन की विभूती सुमति दे दे ताल ।
मान कहना तो सकल तन डाल दूं गुणमाल ।

http://sahjanandvarnishastra.org/

तिहूं जग धरे तुव पद भाल ॥५॥
जगत क्या इक कुमति वेश्या का विशाल मुहाल ।
मन लुभाने को 'मनोहर' दिखत सज्जित माल ।
इन्द्रिय विषय पांच दलाल ॥६॥

(४७)

भैया धोखे में मत आना ॥टेक॥
जिनको तू परिवार कहत है वे मतलब की खाना ।
पाप करा मरघट में फूंके रहि जै है पछताना ॥१॥
जिसको प्यारी नार कहै तू या सम अरि नहिं आना ।
राध रुधिर मल पूरित तन में होता मूर्ख दिवाना ॥२॥
जिसको तू धन संपति कहता वह है विपत्ति निधाना ।
तृष्णा का दृढ़ बन्धन बांधे क्लेश दिखावे नाना ॥३॥
पंचेन्द्रिय के भोग विषय ये जिनमें रह्यो लुभाना ।
चखत मधुर विष फल सम लागे करि है दुर्गति नाना ॥४॥
आया मुट्ठी बांध 'मनोहर' हाथ पसारे जाना ।
दो दिन का यह खेल तमाशा मिट्टी में मिल जाना ॥५॥

(४८)

यम राजा के देश काम भोग गादी बिछा ।
सुख चाहन लवलेश चाह चादरा ओढ़ कर ॥
धन रूखड़ की छांह मोह नींद बेहोश जन ।
ताहिं जगावन जाय साधु सरस समता सदन ॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

जाग रे जग हे मुसाफिर मोह में क्यों सो रहा ।
ये करम ठग तेरे धन को लूटते क्यों खो रहा ॥टेक॥
धन विभव के स्वप्न सारे देख कर मानी बना ।
धन गिरा परिजन मरा ये स्वप्न लखि क्यों रो रहा ॥१॥
तेरे घर शिवथान को जाता महारथ ज्ञान का ।
मनुष भव के समय जावे वक्त पर क्यों सो रहा ॥२॥
ज्ञान रथ पाने को तू गर वक्त पर जगता नहीं ।
तो समझ लेना विषय वन में भटकता ही रहा ॥३॥
क्रोध गज मद सिंह छल अहि लोभ राक्षस है जहां ।
काम शर वेधे वहां क्यों आलसी बन सो रहा ॥४॥
दे सुगुरू को भक्ति पाले शिव टिकट वैराग्यमय ।
रत्नत्रय पाथेय ले चल काल थोड़ा ही रहा॥५॥
क्षणिक छाया में पड़ा भव ताप की गर्मी सहे ।
जग 'मनोहर' चल यहां यम भूमि में क्यों सो रहा ॥६॥

(४९)

सरासर स्वप्न सम सब शोर ॥टेक॥
जिनका मुझ पर प्यार बना था, भारी आशागार बना था,
दुनियां की लीला दिखला के वे गये किस ओर ॥१॥
कामी स्वप्न विभव सुख भावे, निज निधि विसर विषय ललचावे,

http://sahjanandvarnishastra.org/

लूट रहे हैं ज्ञान खजाना, कर्म आठों चोर ॥२॥
ममता निंदियों में मस्ताने, लुटते हो जग में मनमाने,
तेरी ज्योति चन्द्रिका आगे, मोह का घन घोर ॥३॥
छिन में राजा रंक सयाने, मूरख सुखिया दुखिया माने,
छिन में नीच दीन कहलावे, छिन बनै सिर मौर ॥४॥
ज्ञान भान की लाली आवे, मिथ्या निश का तिमिर विलावे ।
मोह नींद से झट जग जाना, हो जावेगा भोर ॥५॥
भोग योग पल मात्र 'मनोहर', कल्पित सुख में प्रेम नहीं कर ।
मोह नींद तज सावधान बन, हो जा आत्म-विभोर ॥६॥

(५०)

तुम्हारा तुम बिन कौन सहाय ॥टेक॥
क्या जन बान्धव क्या धन दौलत क्या घर दर क्या काय ।
देते क्षण सुख देते क्षण दुख साथ न आयें जाय ॥१॥
मित्र शत्रु कोई नाहिं तेरा क्यों भ्रम में बौराय ।
तुम्हीं शत्रु जब होय विभावी, समता सो हित पाय ॥२॥
राग द्वेष तज वीतराग सुख निज अनुभव सों पाय ।
खुद ही में खुद राच 'मनोहर' विषयनि मत ललचाय ॥३॥

(५१)

तेरा जग में साथी कौन ॥टेक॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

बोलें बान्धव प्राण पियारे, सोचें माया होय सहारे ।
पुण्य बिना सब होत दुखारे, यासों बैठो मौन ॥१॥
धन कन कंचन तन धन यौवन, धाम सदन वैभव बल उपवन ।
अन्त समय ये होत विराने, पर्स चले जिम पौन ॥२॥
मोह महा घनघान हटा ले, ज्ञान भान किरणें प्रगटा ले ।
धर्म बिना कुछ बोल 'मनोहर' साथ चलेगा कौन ॥३॥

(५२)

साजन कहना मेरा मान ॥टेक॥
माया वेश्या प्रेम पुजारी, होकर अपना ज्योति विसारी ।
समता की सुध लेऊ कराऊं, साम्य सुधा रस पान ॥१॥
शान्ति सरित में आवो नहायें, तोष लहर में केलि करायें ।
तन तन गुण भूषण पहिनायें, तिहुं जग देखे शान ॥२॥
लोक शिखर पर तुम्हें बिठायें, आकुलता का ताप मिटायें ।
इन्द्र नरेन्द्र मुनीन्द्र सदा शिर नाय करें सन्मान ॥३॥
नित्यानंद निधान बतायें, पर पद दैन्य सकल विनशायें ।
स्वच्छ 'मनोहर' रूप सजायें, सुखमय शिव अमलान ॥४॥

(५३)

करलो जो मर्जी होवे, पर याद रख लो,
कर्मों का फल पाना होगा ॥टेक॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

चाहे इन हाथों से जीवों की हिंसा कर लो,
भोलों की संपति हर लो, सारे अन्याय कर लो ।
चाहे तो दान कर लो, धर्म कमालो ॥कर्मों का०॥१॥
चाहे इस जिह्वा से गाली अल्फाज़ कहलो,
औरों की निन्दा करलो, विषयों की बातें कहलो ।
चाहे जिन बैन बोलो, प्रभु का गुण गालो ॥क०॥२॥
चाहे इस मन्सा में पर का नुकसान सोचो,
मतलब अपमान सोचो, दुख या अपमान सोचो ।
चाहे कल्याण सोचो, ईश्वर को ध्यालो ॥क०॥३॥
जिसका जो बीज बोये, उसका फल फूल होता,
दुख का क्यों बीज बोता, खाता भव सिन्धु गोता,
जीवन क्यों व्यर्थ खोता, चेतो 'मनोहर' ॥क०॥४॥

(५४)

कलि का बहाना ले जन क्या पाप कर रहे हैं ।
इसके ही फल में भाई संताप सह रहे हैं ॥टेक॥
जिन्होनें अपने तन से पैदा किया व पाला ।
कन्यायें बेंच कोई घर धन से भर रहे हैं ॥१॥
लेना छंटाक सत्रह देना छंटाक पन्द्रह ।
माया के हेतु निश दिन अन्याय कर रहे हैं ॥२॥
भोलों पे कोई झूठे ही जाल रोप देते ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

झूठी गवाही देने तैयार हो रहे हैं ॥३॥
औरों का धन हड़प कर मस्ताने बने जाते ।
मतलब के लिये गुरुवों को दोष लगाते हैं ॥४॥
असहाय निर्बलों को दे त्रास फूल करके ।
अपनी बड़ाई करके एंठों में मर रहे हैं ॥५॥
व्यभिचार पाप करने में मानते भलाई ।
माता बहिन न समझें बे मौत मर रहे हैं ॥६॥
मन कुछ कहे करें कुछ इनको भिड़ाया उनको ।
मतलब के लिये पापी बदनाम हो रहे हैं ॥७॥
जो घास फूस खाकर हो पेट भरते अपना ।
उनके गले पे निर्दय हथियार धर रहे हैं ॥८॥
तृण खाके पेट भरते रहते है विजन बन में ।
उन बेकसों पे गोली का वार कर रहे हैं ॥९॥
औरों का मांस खाकर बनते हैं लाट साहब ।
अचरज बड़े बड़ों के चरणों में नम रहे हैं ॥१०॥
आमद को हक़ सर्मा का पर दान के ज़िकर पर ।
दादा नहीं न बाबा ये मिस बना रहे हैं ॥११॥
धर्मायतन बनाने पैसा न एक निकले ।
व्यभिचार को तो वेश्या बाज़ार बन रहे हैं ॥१२॥
जिनधर्म सुधा पीने की चाह यहां किसको ।
राई के तमाशे में सब रात जग रहे हैं ॥१३॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

पापों से रे 'मनोहर' यहँ शान्ति मिली किसको ।
पापों से जो बचे वो आनन्द पा रहे हैं ॥१४॥

(५५)

तेरा धन अभिराम जोड़ता क्यों झूठा धन धाम ॥टेक॥
तेरी ज्योति त्रिजग व्यापक है, लोका लोक सकल ज्ञायक है ।
तेरा घर शिवधाम, जगत में क्यों होता बदनाम ॥१॥
समता सुधा सुरस का स्वादी, बनत स्वरूप बिसार विषादी ।
तेरा सुख अविराम, ढूंढता क्यों जग में विश्राम ॥२॥
तू कृतकृत्य त्रिजग से न्यारा, यह सारा संसार असारा ।
तू महान निष्काम, करे क्यों जग में झूठा काम ॥३॥
दुर्लभ यह तन कुल जिनवानी, चिन्तामणि ज्यों उदधि समानी ।
तू है सम सुख धाम 'मनोहर' क्यों होता दुख धाम ॥४॥

(५६)

शिव साधन के कारण कब बन में डोलूं रे ॥टेक॥
जान लिया यह भोग विषय सब केवल दुख दातार ।
छोड़ गये जो भोग हुए वो शिव रमणी भरतार ॥
कब सोहं कब सोहं का अनुभव घोलूं रे ॥१॥
धागा तक नहिं साथ चलेगा, हंस अकेला जाय ।
या दुनियां में कोई न मेरा फिर क्यों रहूं लुभाय ।
कब समता रानी से अपना नाता जोड़ूं रे ॥२॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

मतलब के सुत बान्धव नारी मतलब का संसार ।
तेरे मतलब का नहिं तन धन सब विपदा भंडार ।
कब ममता डायन से अपना नाता तोड़ूं रे ॥३॥
पंच परम गुरु ही अविनाशी सुख निमित्त करतार ।
औरों का संग बना 'मनोहर' अब तक दुख दातार ।
कब शान्ति सलिल से अपने पातक धोलूं रे ॥४॥

(५७)

अब हम काहू विध न मरेंगे ॥टेक॥
जान लिया कर्मों का छल अब इनसे दूर रहेंगे ।
समकित मेरा सांचा साथी इसका साथ करेंगे ॥१॥
अथिर अपावन तन के खातिर नहिं निज घात करेंगे ।
वसु गुण भूषण भूषित चित का ही नित ध्यान धरेंगे ॥२॥
थल थल बसत यहां त्यों यह तन तज अन देह बसेंगे ।
तो भी हान हमारी क्या गर आत्म रूप सुमरेंगे ॥३॥
मोह सैन्य को शील शस्त्र से निश्चय सो जीतेंगे ।
आतम रूप का मधुर 'मनोहर' अनुभव अमृत पियेंगे ॥४॥

(५८)

ऐसे मुनिराज बसो मोरे मन में। जिनके राग न द्वेष स्वतन में ॥टेक॥
धन कण कंचन लाभ विषय सुख बंदन गृह जीवन में ।
रंच न राग करे मुनि जैसे गेही जीरण तृण में ॥१॥

http://sahjanandvarnishastra.org/

निन्दन बध बन्धन अलाभ भय रोग वियोग मरण में ।
रंच विषाद नहीं जिन मुनि के बसत मसान गुफन में ॥२॥
भूख प्यास सर्दी आदिक जो होय उपद्रव तन में ।
ब्रह्म विलासानन्द मगन है रंच न खेद हो मन में ॥३॥
करुणा सिन्धु दीन जन बन्धु तारण तरण भुवन में ।
जयवन्तो जिय जासु कृपा कर निवसत मुक्ति सदन में ॥४॥
मार मदन मद मर्दन मुनिवर जीतत विधि रिपु छिन में ।
आओ विराजो शीघ्र 'मनोहर' के नैनानि पन्थन में ॥५॥

(५९)

किस तरह तुमको रिझाऊं हे प्रभो महावीर जी ।
तुम विरागी मैं सराग अधीर हूँ तुम वीर जी ॥टेक॥
द्रव्य से नैवेद्य से होते प्रसन्न न तुम कभी ।
दीप माला मोदकों से नेह नहिं लाते कभी ॥१॥
गृह कुटी मंदिर सजाऊं तो न तुम आते कहीं ।
आपके गुण नाद क ये शब्द खिर जाते यहीं ॥२॥
आपके निर्वाण उत्सव में सजाऊं देह को ।
क्या विदेह प्रसन्न होते देख कर मल गेह को ॥३॥
क्या करूं मैं क्या चढ़ाऊं नाथ कैसे खुश करूं ।
देव तुमसे पीर हरने की सुहठ कैसे करूं ॥४॥
भक्ति उत्सव के बहाने पोष लूं क्या इन्द्रियां ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

एक तेरी भक्ति बिन क्या सोहती हैं बिन्दियां ॥५॥
भावना से पोत कर वैराग्य मंदिर शुद्ध कर ।
ज्ञान का दीपक सजाऊं सत्य श्रद्धा तैल भर ॥६॥
ज्योति अनुभव की जगाऊं मोह तम का नाश हो ।
साम्य सिंहासन सजाऊं अतुल ऋद्धि विकास हो ॥७॥
आपको तहं चैत्य मूरति को बिठाऊं भाव से ।
देख कर अनुपम कृपा भर जाऊं शुद्ध स्वभाव से ॥८॥
आपका वह शुद्ध ब्रह्म स्वरूप यदि परसन्न है ।
तो 'मनोहर' की निराकुलता अधिक आसन्न है ॥९॥

(६०)

हे विश्व बन्धु शांति सिन्धु, सुख निधान जी करुणा निधान जी ।
अब मेरे कर्म क्लेश हरो गुण निधान जी, सब के महान जी ॥टेक॥
माना कि मैंने मोह धार पाप बहु किये, जिय घात अति किये,
परिताप भी किये, परिहास भी किये ।
पर आप तरण तारण भव वास हर हुए, कल्याण कर हुए ॥१॥
मुनि मानतुंग जी को नृपति ने था सताया, द्वेषी का सिखाया,
जेलों में बिठाया, तालों को लगाया ।
वृषभेश भक्ति ने सभी तालों को तुड़ाया, फाटक भी गिराया ॥२॥
श्री वादि मुनि का हास द्वेषियों ने था किया, कोढ़ी बयां किया,
नृप देखने गया, अतिशय वहां भया ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

हिम के समान कान्तिमान देह हो गया, नृप जैन रुचि हुवा ॥३॥
नृप सेठ सुदर्शन जी को बिन दोष सताया, रानी का सिखाया,
झट हुक्म सुनाया, शूली पै चढ़ाया ।
तब आपकेही ध्यान ने शूली से बचाया, आसन पै बिठाया ॥४॥
कविराज धनंजय हुए जिन भक्ति में मगन, नारी के सुन बचन,
अहि ने डसा नदन, छोड़ा न प्रभु भजन ।
स्तुति प्रभाव पुत्र का निर्विष हुवा सुतन, धनि धन्य भक्ति धन ॥५॥
सोमा ने ध्याय तुम्हें हाथ कुम्भ में डाला, जहं नाग था काला,
जिहि ज़हर विसाला, विकराल कराला ।
तब आपकी कृपा ने तहं संकट टाला, की फूल की माला ॥६॥
जन भ्रम प्रिये मिटालो अगनि कुंड में गिरकर, आदेश ये सुन कर,
प्रविशी तुम्हें सुमर, तब शील शक्ति कर ।
तहं स्वच्छ सलिल पूर्ण हुवा कुंड सरोवर, अरविन्द मनोहर ॥७॥
सासू ने अंजना को झूठ दोष लगाया, निज घर से भगाया,
बनवास सहाया, तब आपको ध्याया ।
जिन रत्न बिम्ब दर्श हुए देव सहाया, दुख एक न आया ॥८॥
कौरव ने सभा में सती द्रोपदि को सताया, तन चीर खिचाया,
तब आपको ध्याया, हुए आप सहाया ।
तहं शील की महिमा ने गज़ब चीर बढ़ाया, संकट से बचाया ॥९॥
गुण गाये इन्द्र आपके जु अपनी उमर भर, पाये न पार पर,
हम सारिखे किंकर, क्या जाने भक्ति कर ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

फिर भी तिहारे नाम सुमरने से प्रीति कर, पाते हैं शान्ति वर ॥१०॥
हे नाथ चाहिये न मुझे लोक संपदा, वह तो है आपदा,
संसार तापदा, दुख खान पापदा।
चाहूं कृपाल हो सदैव मात शारदा, कल्याण मार्गदा ॥११॥
जिन भोग सुखों के लिये हैरान सब हुए, शैतान बन गये,
अन्याय बहु किये, वीरान तक हुए।
वे भोग कुछ समय को भि महमान न हुए, फिर चाहूं किस लिये ॥१२॥
जिनको सुखी करने के लिये पातकी हुए, उन्मत्त से हुए,
संताप अति किये, परिताप भी किये।
वे मेरे घोर नर्क दुख में सांझ न हुए, फिर चाहूं किस लिये ॥१३॥
जिस संपदा के लाभ को दुख धाम बहु हुए, बदनाम भी हुए,
बेकाम भी हुए, अविराम मन हुए।
इक दो छदाम तक भी मेरे साथ न हुए, फिर चाहूं किस लिये ॥१४॥
दुख सिन्धु से अनेक जीव आपने तारे, निज भक्ति सहारे,
दुख द्वन्द्व निवारे, संकट से उबारे।
टुक दृष्टि 'मनोहर' पै करो मुक्ति के प्यारे, संसार से न्यारे ॥१५॥

(६१)

छिन में भारी भूल बनेगी, जो मति ख्याति ओर उलझेगी ॥टेक॥
दुर्धर तप व्रत संयम बल से जो विशुद्धता आन बनेगी।
कीर्ति चाह से भाव शुभाशुभ कर्म रूप परिणेगी ॥१॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

इन्द्रिय विजय परिषह जय सब आकुलता की खान बनेगी ।
निज अनुभूति पियूष कटोरी, गिर कर टूक टूक होवेगी ॥२॥
ज्यों चारों गति उलझत आये, तैसी उलझन होत रहेगी ।
भूख प्यास गर्मी सर्दी इत्यादि वेदना नहिं विनशेगी ॥३॥
क्षेत्र असंख्य अनन्ते प्राणी कहं कहं लो कीरति प्रगटेगी ।
कीर्ति अथिर दुख सुचिर 'मनोहर' चेतो तो सुख शांति मिलेगी ॥४॥

(६२)

चेतन प्यारा, रूप तुम्हारा, खोवत क्यों भ्रम मान,
हो अज्ञान, चेतो चेतो चेतन ।
निज निधि जारी, हुए भिखारी, दर दर भ्रमत अजान,
हो वीरान, चेतो चेतो चेतन ॥टेक॥
जैसा भोगों में रमा भूल के दुख को इक दिल ।
वैसा अपने में रमें भूल के पर को इक दिल ॥
शान्ति के श्रोत से संतोष का सागर होता ।
झूठ माया के नज़ारों को न लख सुन रोता ॥
गर मोह मद्य के नशे में ज्ञान न खोता ।
तो साम्य सुधा स्वाद अमर हो लिया होता ॥
तू न हुआ स्वाधीन पराई आशहिं बन दीवान,
हो दुख खान, चेतो चेतो चेतन ॥१॥
चाह पर की रहे सब दोषों का सिर ताज यही ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

यासों खुद ही पै तथा विश्व पै साम्राज्य नहीं ॥
बह जाय जो उदारता प्रवाह हर बखर ।
तो शान्ति दया तोष क्षमा पाँय अपना घर ।
छोड़ 'मनोहर' आश विरानी, जिनपति का कर ध्यान,
हो कल्याण, चेतो चेतो चेतन ॥२॥

(६३)

चेतन तजहु विषय असार ।
लाभ रक्षा नाश में दुख का सदा करतार ॥टेक॥
कष्ट सहि सहि निश दिवस भारी वहै श्रम भार ।
सुकृत जसि अनुकूल पावत विषय साधन रार ॥१॥
अनल जल नृप चोर बान्धव और बहुते यार ।
वार इनका बच भी जाये भाग्य का दुसवार ॥२॥
विषय साधन नाश के दुख का न कोई शुमार ।
प्राण खोवत मूढ रोवत धैर्य हो न लगार ॥३॥
हे 'मनोहर' मान तज इन विषय विष में प्यार ।
तू न छोड़े तो तुझे ये छोड़ देंगे झार ॥४॥

(६४)

सुनो अर्ज भगवन् मैं क्या चाहता हूं ।
रहूं दास तेरा यही चाहता हूं ॥टेक॥
तेरे दास रहने में जो सुख भरा है,

http://sahjanandvarnishastra.org/

नहीं इन्द्र वैभव में वह सुख जरा है।
तो क्यों रत्न तज कांच का खंड चाहूं,
तुम्हें चाहिये था वही नाथ चाहूं ॥१॥
नहीं स्वर्ग की रंच भी कामना है,
विषय दाह ही की तो वो नामना है।
प्रिया संपदा भोग के सुख चहूँ ना,
सभी नर्क जाने का सीधा नमूना ॥२॥
रमूं आप में आप पर में रमूं ना,
कभी भाव पर ताड़ना के करूं ना।
सदा ध्यान तेरा रहे मेरे स्वामी,
विभव देख कर भी बनूं मैं न कामी ॥३॥
बँधै पुण्य सुखदाय नहिं कामना है,
लखूं रूप तेरा यही भावना है।
बनो पूज्य मुझको पुजारी बनाओ,
'मनोहर' को जग जाल में मत रुलावो ॥४॥

(६५)

किसके अर्थ बनूं मैं दीन।
आत्म तत्त्व तज अन्य जगत के अर्थ सार से हीन ॥टेक॥
प्रगट भिन्न जन बन्धु मान कर हाय रह्यौ मैं लीन।
बुद्धि विवेक सभी खो बैठ्यौ पल लोभी जिम मीन ॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

भोगे दुख सुख विविध सुचिर पर मानत अजहु नवीन ।
तृप्ति भोग से हो नहिं पाई हुई न आशा छीन ॥२॥
तात मात सुत नार संपदा भोग विषय क्षण क्षीण ।
अशरण अशुभ आपदामय में रम कर होऊँ न शीन ॥३॥
अब चैतन्य सनातन कुल को भज कर होऊं कुलीन ।
आत्म ज्योति निधि पाय 'मनोहर' होऊं अहीन अदीन ॥४॥

(६६)

जानूं प्रभू तुम्हें जभी भव पार लगादे ।
मानूं दयाल जब तुम्हें जग जाल मिटादे ॥टेक॥
तुम निर्विकार भक्ति से प्रसन्न न होते,
निन्दा भि करे कोई तो न क्रुद्ध भी होते ।
फिर भी तुम्हारे ध्यान से जन पार हो जाते,
तेरी दया से साम्य सुधा स्वाद पा जाते ॥१॥
आये न देव लोक से थे आप यहां पर,
तो भी हुआ था देश सर्व सम्पदा का घर ।
जब ध्यान द्वार से हृदय मंदिर में बुलाते,
मम सम्पदा दिलाने में क्यों देर लगाते ॥२॥
तुव बिम्ब संग से अजीव शक्ति पा जाते,
सो मानथंभ मानि मान चूर कर जाते ।
जब मन सरोज में प्रभू भक्ती से बिठाते,

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

निज शक्ति 'मनोहर' को नाथ क्यों न दिलाते ॥३॥

(६७)

चेतन को चेतन ही चिह्न ।
अन्य अशेष अन्य भावों से परिणति जाकी भिन्न ॥टेक॥
राग द्वेष कल्मष से कलुषित जो है अध्यवसान ।
कनक कालिमा सम चेतन को जुदा गिने विद्वान ।
द्रव्यतः मैं हूँ विशद अखिन्न ॥१॥
प्रति प्रदेश मिश्रित जो अब तक बना कर्म सन्तान ।
भिन्न लखावे विशद ज्ञान अरु बतलावे अनुमान ।
वह है जड़ मैं हूँ निर्विण्ण ॥२॥
राग द्वेष विधि देह जहं चेतन सो हों न अभिन्न ।
परिजन धन तो प्रगट जुदे हैं हों न तनिक आसन्न ।
उन बिन क्यों मानूं आपन्न ॥३॥
ज्ञायक भाव वसाय विभाव न रूप वही अमलान ।
वह सर्वज्ञ सर्वदर्शी प्रभु अनुपम सौख्य निधान ।
उसी में रहो 'मनोहर' लीन ॥४॥

(६८)

हे विरागता माता आवो । आकुलता का ताप मिटावो ॥टेक॥
क्लेश गर्त मय मोह भूमि पै बिलखूं मुझको शीघ्र उठावो ।
तत्त्व रमण संतोष श्रवण सम्यक्त्व सदन निज अंक बिठावो ॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

सत्य मोदमय हास्य दिखा कर सतत सहज आनन्द जगावो।
उस ही पद में अमर रहूं ज्यों समता अमृत पान करावो ॥२॥
साक्षर तदपि मूक बानी सुनि भाव जानि निज विरद दिखावो।
बाल 'मनोहर' पे करुणा कर शरण राख भव पीर मिटावो॥३॥

(६९)

कषायों और भोगों से बहुत ही हो गया हैरान।
छिनक छिन वे प्रगट हो हो बनाते हैं मुझे वीरान ॥टेक॥
भोग अभिलाष चिन्ता की विकलता का ठिकाना क्या।
आत्म हित सोचते भी तो उखड़ पड़ता कभी अभिमान ॥१॥
ख्याति की चाह में माया पुजारी बनना पड़ता है।
न मन में धीरता इतनी गुणी का सुन सकूं सन्मान ॥२॥
मान रक्षा में झूठा हठ सरासर करना पड़ता है।
भले ही लोक न माने न हठ का हो कभी अवसान॥३॥
वतन तन धन सदन परिजन व कुल की चाह भी छोड़ी।
न छूटी मान अभिलाषा न हो सकता कभी कल्याण॥४॥
प्रशंसा कीर्त्ति भी तो एक धोखा बाज चक्कर है।
'मनोहर' काम आतम राम से रक्खो तो हो उत्थान ॥५॥

(७०)

भगवन आन बसो मोरे मन में ॥टेक॥
चहुं गति भटका, रति विष गटका, आकुलता का मिटा न खटका।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

मम कारज तुम ही सो अटका, विनति करूं चरणनि में ।।१।।
जिन छिन ध्याये शिव पहुंचाये बिन कारण ही हित उपजाये।
आज हमारी बारी स्वामी राखो नाथ शरण में ।।२।।
आन कुवेषी रागी द्वेषी वे खुद डूब रहे भवसागरसी।
तुम अविकार जगत से न्यारे तुम नामी त्रिभुवन में ।।३।।
आज 'मनोहर' का भव दुख हर अन्तर्यामी अब करुणा कर।
पल पल छिन छिन निश दिन स्वामी बसत रहो मो मन में ।।४।।

(७१)

भगवान दास तेरा बेचैन हो रहा है।
कुछ धीर तो बंधा जा बेहोश हो रहा है ।।टेक।।
मुझको अजान लख कर दें दुःख कर्म मिलकर।
मम ज्ञान धन छुड़ा कर निर्धन बना रहा है ।।१।।
सुत नार गेह उपवन ऐश्वर्य स्वादु भोजन।
टुकड़े बता बता ये मुझको तंगा रहा है ।।२।।
विधि जाति का न कुल का पहिचान भी निराली।
फिर भी अनादि से ये पीछे ही पड़ रहा है ।।३।।
छिन शान्ति छवि दिखावो, मिथ्यान्ध को हटावो।
क्यों तेरी शरण पाये वीरान हो रहा है ।।४।।
वैभव अनेक पाया फिर भी न टुक अघाया ।।
वैभव के प्यार र में ही बेकाम हो रहा है ।।५।।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

भव भव तिहारी भक्ति पाता रहे 'मनोहर' ।
जिस भक्ति बिना भव जल में गोते खा रहा है ॥६॥

(७२)

सुमतिः— चेतो जी चेतो चेतन हो जग में न डोलो ।
मोही चेतनः-देखो जी देखो सुमते हो जग सुख अनमोलो ॥टेक॥
सुमतिः— काहकूं प्यारे भ्रम मानत है, कुमति से प्रीति करी काहे ।
तुष्ट हुआ नहिं तू अनादि से अब क्या तुष्ट हुआ चाहे।
ईंधन से अग्नी को संतोष होवे तो बोलो ॥चेतो०॥१॥
मोही चेतनः-दादा बाबा पुत्र कहत हैं प्यारी नार कहत प्यारे ।
दुनियां कहती भोगी सुखिया पंडित दानी धनवारे ।
विषयों का सुख तो है सबसे भारी अनमोलो ॥देखो०॥२॥
सुमतिः— नारी सुत संपति के कारण पाप कमा दुर्गति जावे ।
दुनियां मतलब ही के खातिर तेरा झूठा यश गावे ।
अपनी ही ज्ञान तराजू से सुख दुख तोलो ॥चेतो ०॥३॥
मोही चेतनः-हा! जिस फन्दे में दुख पाया उस ही के फिर गुण गाऊं।
क्यों न 'मनोहर' सुमतीसो रचि नित्य अभय पद प्रगटाऊं।
जावो जी जावो कुमते, ओ हमसे न बोलो ।

http://sahjanandvarnishastra.org/

मोही उन्मत्त जीवों के ही सिर पर डोलो ॥४॥

(७३)

भैया काल तेरे भाल ।
दीन भूपति मूढ पंडित तकत वृद्ध न बाल ॥टेक॥
देव नारक भोग भूमिज चरमदेही टार ।
और जीवों की न आयु की प्रतीति लगार ॥१॥
आयु निर्जर के बहाने व्याधि आदि हज़ार ।
मृत्यु बाद न कर्म छूटै छूट जै घर बार ॥२॥
धर्म के कर्त्तव्य कल को छोड़ ना मत लाल ।
वश न चल है जब अचानक आय सिर पर काल ॥३॥
भोग की अभिलाष ही तो विष भरें हैं प्याल ।
स्वाद ले समता सुधा तो काल का नहिं जाल ॥४॥
सुख स्वभावी खुद 'मनोहर' क्यों करै पर प्यार ।
छोड़ पर रति निज न रम हो तो कुगति हर बार ॥५॥

(७४)

न अच्छा कभी दिल सताना किसी का ।
दया बिन विफल पाना इस जिन्दगी का ॥टेक॥
सभी प्राण धारी के सुख दुख बराबर ।
न अपने से कम दर्द समझो किसी का ॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

हमें दर्द हो जाता कांटा चुभे गर ।
इसी भांति समझो सदा दुख सभी का ॥२॥
तन मन वचन को कटुक मत बनावो ।
दया बिन सदा दुःख चारों गती का ॥३॥
हुआ सो हुआ अब भी संभलो 'मनोहर' ।
दुखावो नहीं दिल कभी भी किसी का ॥४॥

(७५)

कहा सब ग्रन्थ शासन में दया ही सार धर्मों का ।
दया ही तप दया ही व्रत दया ही जाप भगवत का ॥टेक॥
दया श्री राम ने ब्राह्मण कपिल पर की विपत्ति में ।
रचा देवों ने बन में रामपुर तब रत्नमणियों का ॥१॥
दया श्री नेमि ने की बद्ध पशुवों पे तजा तहं व्याह ।
बने शिव कामिनि के दूल्हा संभाला राज्य मुक्ति का ॥२॥
दया महावीर ने की मूक पशु को बलि से बचवा कर ।
सदा जयकार होता है श्री महावीर शासन का ॥३॥
'मनोहर' सोच कर के प्राण सब जीवों के अपने से ।
लगा कर तन व धन अपना मिटावो क्लेश जीवों का ॥४॥

(७६)

ब्रह्म में इस ब्रह्म द्वारा पूर्ण रुचि सज्जान हो ।
ब्रह्म में लय ब्रह्म हो तो ब्रह्म का कल्याण हो ॥टेक॥

भोग में जिस लीनता से रम रहा बहिरात्मा ।
ब्रह्म में वैसा रमें हो जाय तब परमात्मा ॥१॥
भोग तृष्णागार इनमें शान्ति गर होती कहीं ।
आज तक तो भोग डाले शान्ति क्यों पाई नहीं ॥२॥
मल जनित मल भार मलस्रावन अथिर इस देह में ।
प्रीति करने में न हित है हित अचल के नेह में ॥३॥
यत्न कुछ हो जाय कुछ होनी में कर्म प्रधान है ।
आश की फिर भीख ही में क्या रखा सन्मान है ॥४॥
मृत्यु भय में मुक्ति नहिं सुख चाह में कल्याण है ।
चाह भय दोनों न हो तो आत्म सुख आसान है ॥५॥
भोग भव भव भोग डाले जूँठ में क्या सार है ।
ब्रह्मचारी ही 'मनोहर' शान्ति का आधार है ॥६॥

(७७)

सुख तुझ ही में भरपूर, खोजते क्यों और में ॥टेक॥
जो समरस नहिं सरसावे, मन के न विकल्प मिटावे ।
मदरावे भरमावे, वो ही जन अकुलावे ।
क्यों रचे पर पद में प्यारे, वे जगत के हैं तमाशे, तमाशे ॥१॥
बन जावो ब्रह्म विलासी, पहिचानो निज सुख राशी ।
स्वविकाशी, अविनाशी, क्यों बनते अभिलाषी ।
कामना ही क्लेश कारी, हैं अकामी, सुख स्वभावी, स्वभावी ॥२॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

जो मर्मी हो सो जाने, कैसे मूरख पहिचाने ।
भोगाने दीवाने, पर परिणति लिपटाने ।
आश के जो नहिं भिखारी,क्या कभी होते दुखारी, दुखारी ॥३॥
तू ज्ञायक शुद्ध स्वभावी, दुखिया जब होय विभावी ।
मायावी, परभावी, पर पद का अनुरागी ।
आत्म पद में जो रमोगे, तो 'मनोहर' सुख लहोगे, लहोगे ॥४॥

(७८)

निज परिणाम से संसार। शुद्धि हित शुभ भाव करि अशुभोपयोग निवार ॥टेक॥
बसत जग में जिन सयोगी तदपि नहिं संसार ।
भ्रमत शिव सूक्ष्म निगोदी हों न छिन अविकार ॥१॥
भोग लालस अनुपभोगी कर्म बन्ध अगार ।
भुक्ति मानस भोगता भी करत निर्जर सार ॥२॥
ख्याति मानस साधु आलोचक भरत विधि भार ।
लखि विभाव सुदृष्टि अविरत नहिं डुबे भव वार ॥३॥
ब्रह्म अनुभव बिन अवांछित घोर तपहु न सार ।
ब्रह्म आनंद मगन के प्रति समय सुख संचार ॥४॥
ख्यात निज को रूप जैसो निर्विकल्प उदार ।
परिणमों तैसे 'मनोहर' तो न क्लेश लगार ॥५॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

(७६)

जिय के अहित विषय कषाय, खेद मूल विषाद दायक कर्म बंध
उपाय ॥टेक॥
तनिक से सविपाक निर्जर में तनिक सुख भाय ।
बन विभावी कई गुणित फिर कर्म पिंड बंधाय ॥१॥
अनल इंधन से नदों से सिन्धु क्या विरमाय ।
ज्यों विषय साधन मिलें त्यों चाह दाह बढ़ाय ॥२॥
अहि डसे असि हते जिय विष भखे तन तज जाय ।
विषय विष पीवत सुचिर तक ज्ञान प्राण गमाय ॥३॥
पीजियो समता सुधा रस अतुल सिद्धि उपाय ।
प्रीति पर की तज 'मनोहर' आपको अपनाय ॥४॥

(८०)

करूं क्यों सुख पावन तदबीर ॥टेक॥
नारी सुत का छिन सुख चाहन धारूं यत्न गहीर ।
दो दिन के इस जीवन में भी पद पद भारी पीर ॥१॥
यह संसार मुग्ध जीवों के इन्द्रिय सुख की सीर ।
सत्य स्वार्थ का बोध जहां नहिं असत स्वार्थ की भीर ॥२॥
क्रोध मान माया तृष्णा के पूरण में दिल गीर ।
बने बने में आपा माने बिगड़े पै तकदीर ॥३॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://sahjanandvarnishastra.org/

पै विराग की कीरति रागी और विरागी गाय ।
सांची कीरति में मन देहु ॥२॥
दैवाधीन अथिर इन्द्रिय सुख को सुख हित ललचाय ।
आदि मध्य अवसान दुखहि दुख तिनसों का हित पाय ।
चेतन चिन्तन से सुख लेहु ॥३॥
विधि वैरी क्षयि भोग जुटा कर दें तुव निधि विसराय ।
इन टुकड़ों की आश तोड़ सांची निधि ले उपजाय ।
तत्व निधि महिमाएं लख लेहु ॥४॥
अधिक लाभ के हेतु वणिक् ज्यों अल्प हानि सह लेत ।
तज भंगुर सुख आश भजो समता जु ज्ञान निधि हेत ।
'मनोहर' सांचो लाहु उपेहु ॥५॥

(८३)

रे मन तनिक तू न उदार ।
कपट तेरो प्रगट दीसत कर्म बन्ध अगार ॥टेक॥
तोहि पोषण दुखित होऊं पाप धार अपार ।
तू मुझे आकुल बनाकर चैन दै न लगार ।
धिक् धिक् रे कृतघ्न असार ॥१॥
लखि विराग अगाध सुख झट हो विराग विचार ।
रागियों के राग सुन झट राग का संचार ।
थिर नहिं रहत कोई विचार ॥२॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

तोहि पोषूं तो बढ़ाकर तृषा दे दुख भार ।
तोहि मारे सुखी होऊं तोष का आधार ।
मन का तज 'मनोहर' प्यार ।।३।।

(८४)

भैया भूल गये सुख गैल ।
जहं जावन जो पावन चाहत सुमर वाकों पैल ।।टेक।।
तू चाहत पावन सुख जावन जहं सुख हो भरपूर ।
पै उल्टे मग जितने चाले उतनहि सुख घर दूर ।
मानों मत करो अब झेल ।।१।।
ये गलियां सब विषय महा बन की जिनका नहिं छोर ।
शान्ति सलिल का नाम नहीं तहं प्यास रहेगी घोर ।
फसा लेगी कुमति विष बेल ।।२।।
श्रम कंकण भय कंटक वैधें आपद चोर सताय ।
ये गलियां छिन भुला पाय तब भारी दें उलझाय ।
गिरायें कुगति ठेलम ठेल ।।३।।
चाहे तू सुख धाम है जिसका राज मार्ग संतोष ।
माया तृष्णादिक बन गलियां छोड़ सजो निज कोष ।
'मनोहर' फिर करो निज केल ।।४।।

(८५)

हमारे मन भाये श्री जिन चन्द्र, ध्यावत जिन शत इन्द्र ।।टेक।।

Version 1

y errors at vikasnd@

http://www.jainkosh.org

जो मूर्च्छा आरंभ बढाया नर्कायु का टिकट कटाया ।
तो पहुंचोगे नर्क लोक में होंगे दुख संपात ॥१॥
जो चुगली माया छल छाया, तन मन और बचन कुछ गाया ।
पशु पक्षी तिर्यन्च देह धर घोर सहोगे ताप ॥२॥
जो मूर्च्छा आरंभ घटै हो, कोमल निज परिणाम करे हो ।
तो पावोगे मनुज देह जहं मिलता धर्म समाज ॥३॥
संयम से अनुराग करोगे, शान्ति भाव यदि धरत रहोगे ।
तो पहुंचोगे ऊर्ध्व लोक जहं होते सुख संघात ॥४॥
चारों गति की ये रस्तायें, चल लो जहं तेरो मन भाये ।
फिर न 'मनोहर' कर्म मात्र का बतलाना उत्पात ॥५॥

(८८)

कर बरात वर रीति । जोहो शिव राधा सो प्रीति ॥टेक॥
शारद मात सीख मत भूले, पर पद प्रीति हटादे ।
तू चेतन बन गुण किशोर वर संतन न्योत दिलादे ।
करले भावन वाहन प्रीति ॥१॥
ज्ञान गैस की प्रचुर ज्योति में, निज सुख साज सजा दे ।
श्रुति सुवाद्य के सुललित रव से ब्रह्म स्वदेश गुंजा दे ।
गाले सत्य सनातन गीत ॥२॥
शान्ति तोष नाना आभूषण ज्ञान समीप पठादे ।
चिदनुभूति शिव राधा जननी की शुभ दृष्टि जगादे ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

होवो समता सखि के मीत ॥३॥
शिव राधा सु अनन्त ज्ञान गुण फूल माल पहिनाले ।
सत्य सनातन मंगल पाकर के अपार सुख पाले ।
जग को द्वंद्व 'मनोहर' जीत ॥४॥

(८९)

ज्ञानी पुण्य ब्रह्म कूं भैंट । भव बाधायें मैंट ॥टेक॥
साम्य सुधारस शासन अवसर पायो जिहि उद्योत ।
खोवन पर पद जाय न भव के रोग चिकित्सा हेत ।
अपने ही घर में अब बैठ ॥१॥
शालि जननैं विधि ज्ञानी कृषि कर साधै नहिं तुष भार ।
मिलत धरत धरि उर उदासता सरधै तनिक न सार ।
ऐसी शुद्ध नीति में पैठ ॥२॥
अतर सुगंध रजत चित्रनि में धरत रसिक हित जान ।
पुण्य ब्रह्म त्यों सौंप 'मनोहर' भद्र शरण वर जानि ।
पालो शिव अनन्त सुख भैंट ॥३॥

(९०)

चेतन कर्म दोष न लेश ।
तव विभाव प्रधान कारण विधि उदास विशेष ॥टेक॥
वर्ण वाद न देख साल चढ़ाई ये कर देत ।
चीज़ राखत हो न अपनी चोर गाली देत ।
Report any errors at vikasnd@gmail.com

ऐसे पावोगे क्या पेश ॥१॥

निज स्वभाव न रम के जाने कर्म दूषण देत ।
नृत्य विद्या शून्य अंगन टेढ़ को मिस लेत ।
ऐसे क्या कटै दुख लेश ॥२॥

तुमहिं कर्त्ता तुमहिं भोक्ता तुमहिं हो हरतार ।
तत्व तो समझो न क्यों धो ईश कर्महिं भार ।
ऐसे क्या बचै दुख शेष ॥३॥

अब भी चेतो तो न भूलै छोड़ पर सो नेह ।
दिवस भूल्यो शाम के आ जाय जो निज गेह ।
हो क्यों जग 'मनोहर' शेष ॥४॥

(६१)

भैया कहं चले तुम जात ।
राग लोक सुनो तनिक सुख तहँ भगु झट जात ॥टेक॥

जा रहे तहं छल बड़ा है, सार का नहिं नाम ।
नाम के परिजन लुभा कर करेंगे बदनाम ।
दुख में दे सकें नहिं हात ॥१॥

जो तुम्हारी निधि न जिसका नेक नाम निशान ।
मानते पर से मिले सुख के विकृत परिणाम ।
जैसे श्वान अस्थि चबात ॥२॥

देख ले निर्दोष मूरति आप ही में आप ।
हो 'मनोहर' सौख्य सागर क्यों सहत आताप ।

http://sahjanandvarnishastra.org/

तुम तो स्वर्ण सम अवदात ॥३॥

(९२)

अब है और कितनी रात ।
भोर झांकी तक न देखी दिन कि तो क्या बात ॥टेक॥
रूप निज को भी लखे नहिं घोर है अंधयार ।
आत्म निधि कैसे रखाऊं लखत कर्म गंवार ।
ठाड़े वें लगाये घात ॥१॥
जो सुमति सो भेंट होती तो न भीति लगार ।
कुमति के विधि भाई बन्धु कुमति का संसार ।
घर की फूट में कहं सात ॥२॥
भावना के तेल सों लो तर्क दीप उजार ।
आत्मगृह लखते रहो जब लों न यम का वार ।
ह्व है कबहुं ज्ञान प्रभात ॥३॥
उदैं समकित सूर्य आनन्द कमल प्रमुदित होय ।
नष्ट हो मिथ्या निशा त्रैलोक्य परगट होय ।
होगा तब 'मनोहर' सात ॥४॥

(९३)

आज मन तोकूं हित पन्थ बतायें । तत्व से हेत लगायें ॥टेक॥
जग में जे नर नारी तन हैं, ते सब मल के घर हैं ।
काम उदै भये गोरे तन को मूरख समझत वर हैं ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

मांस पिन्डनि में मन क्यों ललचायें ॥१॥
पुत्र मित्र सब कोरी कल्पना सब जिय मतलब रत हैं ।
प्रबल मोह मिथ्यात्व उदय भये मोही मानत सच हैं ।
झूठ फन्दन में मन क्यों बहलायें ॥२॥
करि निदान कृत पुण्य उदै जो मिलत विषय वैभव हैं ।
करि पर्याय निरत वे वैभव भटकावत भव भव हैं ।
आश बन्धन में मन क्यों उलझायें ॥३॥
चेतन रूप तिहारो जैसो जब तक हो न प्रगट है ।
निश्चय जान 'मनोहर' तब तक ये जग जाल अमिट है ।
तत्व चिन्तन में मन क्यों न लगायें ॥४॥

(६४)

लालसा ही क्लेशों की खान । न संग्रह से दुख मिटत सुजान ॥टेक॥
आशा गर्त प्राणि का ऐसा जामें विश्व समाय ।
विश्व विभूति सभी चाहत हैं किस किस के घर जाय ।
चंचला है सुकृत की आन ॥१॥
जो निधि पाई गर नहीं पाता थी क्या जीवन हान ।
धनिक हुए तो अधिक मिले बिन समझे निज अपमान ।
बढ़ाया आकुलता का मान ॥२॥
सुख मन का विश्राम कहावे नहिं पद्मा परिवार ।
सो सुख तृष्णा शान्त हुए बिन कैसे होय विचार ।

http://sahjanandvarnishastra.org/

विषय सुख हैं तृष्णा की खान ॥३॥
जिनके रंच न विषय आश है सदा ज्ञान तप ध्यान ।
तिन निर्ग्रन्थ साधु गुण का ही करो 'मनोहर' गान ।
करो समता सागर रस पान ॥४॥

(९५)

फिर न यौवन को बल आय, चाहे कैसा हो रस खाय ॥टेक॥
जब तक बल है धर्म कमाले क्यों मद में बौराय ।
वृद्ध भये तब का वश चल है, फिर मन में पछताय ॥१॥
है न भरोसा इस ही बल का रोग अनेकों खाय ।
समवर्ती यमराज न जाने किस दिन दे धमकाय ॥२॥
बालपना अज्ञानमयी है, वृद्ध अर्ध मृत भाय ।
धर्म सधै इक तरुणाई में मत विषयन भरमाय ॥३॥
गिरि सो गिरत सरित सम यौवन को फिर वेग न आय ।
अहित छांड हित पंथ भजो दुनियां कैसउ बहकाय ॥४॥
तू विधि कर्त्ता तू फल भोक्ता कोई नाहिं सहाय ।
वीतराग विज्ञान शरण कूं सदा 'मनोहर' ध्याय ॥५॥

(९६)

हित की सुन तनिक सी बात ।
मानना नहिं मानना यह तो तिहारे हाथ ॥टेक॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

अहित भंगुर भोग तृष्णा जन्म मरण विषाद ।
सब अहित का मूल है इक मोह जिहि ललचात ॥१॥
मोह तज निर्मोह हो ले यही हित सुन भ्रात ।
लार सुख दुख में न कोई काय मन बहलात ॥२॥
मोह जीते जीत डाले और दोष निपात ।
पा लिये शुचि लोक उत्तम सर्व गुण संघात ॥३॥
साधु के व्रत कठिन सुनकर काय मन घबड़ात ।
मोह के जीते सकल व्रत झट सहज हो जात ॥४॥
पन्थ हित जानूं नहीं यह सोच क्यों सकुचात ।
मोह को जीते 'मनोहर' खुद समझ आ जात ॥५॥

(६७)

कल्पना है ये कोरी, न है सुख विषयन ओरी ॥टेक॥
शुष्क अस्थि जिम श्वान भखत निज रुधिर खोय सुख जोरी ।
अशुचि देह रमि वीर्य खोय तू सुख मानत बर जोरी ।
छांड दे बात भोरी ॥१॥
भव भव परिजन हुए जीव सब सभी मित्र अरु धौरी ।
भोग सधैया यार बतावे रिपु माने जो छोरी ।
क्या यहां मोरी तोरी ॥२॥
सारी उमर मोह में खोई आयू रह गई थोरी ।
करले ऐसो यत्न 'मनोहर' ज्यों विलसो शिव गौरी ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जन्म की तोड़ डोरी ॥३॥

(६८)

भैया सब जगत को फन्द ।
हित विराग अखंड अनुपम शुद्ध ब्रह्मानन्द ॥टेक॥
मेरा तेरा मानने से ही बढ़ाई रार ।
मृत्यु बाद समाज में से क्या गया कुछ लार ।
करते क्यों कषाय अमंद ॥१॥
नार सुत बान्धव जनों को इष्ट मान लुभाय ।
वें विषय विषफल चखाकर भाव प्राण गमाय ।
डूबत डुबावत भव सिन्ध ॥२॥
आत्म बंधन के लिये है संपदा का जाल ।
सुलझना भारी कठिन है उलझना तत्काल ।
विषयैषी न हो निर्द्वन्द्व ॥३॥
जीव पुद्गल की विभावी देख कर पर्याय ।
क्यों अरत रत हो 'मनोहर' निज स्वभाव भुलाय ।
तुम हो सहज ही सुख कंद ॥३॥

(६६)

प्रभु तारो जी प्रभु तारो ।
अब अपनो विरद निहार नाथ मोहि भव सागर से तारो ॥टेक॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

तुम हो मेरे मैं हूँ तिहारो, पूरो मोकूं तेरो सहारो ।
दुखिया के औगुण न निहारो जन्म मरण दुख टारो,
दुख टारो जी······॥१॥

तुम हो तीन भुवन के स्वामी, तेरो सुजस तिहूं जग नामी ।
मो दुख मेटो अन्तर्यामी, राग द्वेष निरवारो,
निरवारो जी······॥२॥

तुम विराग विज्ञान मयी हो, मोह सैन्य के तुम विजयी हो ।
पावन पतित उधारण तुम हो, विषय विपिन से काढ़ो.
अब तारो जी······॥३॥

(१००)

रे विधि छोड़ दे मम संग ।
मान ले या छेड़ ले फिर आज मोसूं जंग ॥टेक॥
अजड़ जड़ से हो सके नहिं का तिहारो संग ।
साथ छोड़े भी मिटै नहिं मूर्त्त रूप करंड ।
मानो मत करो अब तंग ॥१॥
साम से माने नहीं तो दाम से मन मंड ।
पाई पाई से संभालो जग विभूति करंड ।
पर मत होओ यों उद्दन्ड ॥२॥
का निहारो वश चले जब मैं भजूं चित्पिन्ड ।
तू हमारो का बिगाड़े मैं सदैव अखंड ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

छोड़ो पैल के सब रंग ॥३॥
परम पैनी सुबुधि छैनी से विदारूं अंग ।
छिनक में झड़ झड़ झरोगे देऊं ऐसो दंड ।
क्या हो तुम इसी में चंग ॥४॥
धार ले अब हे 'मनोहर' धर्म चक्र प्रचंड ।
तो झटिति कबहूं बनोगे बन असंग अनंग ।
पै ही सुख अनन्त अभंग ॥५॥

(१०१)

क्यों लागे अब तृतिय ब्याह की खट पट अट पट सी भारी ।
नेग रिवाज बज़ार राग के नटखट होंगे क्या जारी ॥टेक॥
सम्बन्धी परिजन समझावत दे मिसाल भारी भारी ।
हो छब्बीस वरष के ही तुम अभी उमर रक्खी सारी ॥१॥
सोचूं ऐसी गुणवाली क्या बनी गृहस्थी अरु नारी ।
काम उदै भये मोही माने अब गुण भाजन गुणवाली ॥२॥
बसा आज तक गृह फंदों में स्वार्थवासना ही धारी ।
निज पद भूल्यौ पर पद भूल्यौ दुख को सुख मानो भारी ॥३॥
परिजन सुख दुख वृद्धि हानि में लाभ हानि की मति धारी ।
हुई संतति, हुइ ऐसी तन छोड़ चले दो जी धारी ॥४॥
घर सुत सो कहुं नाम चलो सुख मिलौ काहु को धी धारी ।
निज रत होय अनन्त सुखी बन ऐ नरभव के व्यापारी ॥५॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

धन्य धन्य ते बड़ भागी जिन भोग रोग इच्छा टारी ।
जाऊ 'मनोहर' शरण उन्हीं के पावन चरणन बलिहारी ॥६॥

(१०२)

मित्र जन सुन लो हित की बात। जचै तो मान लियो बुधवान ॥टेक॥
चेतनता ही जीव कहाये, सो सबके इक रूप लखाये ।
दीन हीन का भेद न करि जो सब पै करुणावान ।
वही वीरों में वीर प्रधान, सताना पर का है आसान ॥१॥
पूरब पुण्य हि संपति पावे, पाप उदै संपत्ति विलावै ।
धन पाकर जो धर्म कमावे, वे ही जन धनवान ।
करे जो कृपण नहीं टुक दान, उन्हों का धन पाषाण समान ॥२॥
विद्या का फल तत्व समझना, तत्व समझ हित कारज करना ।
बड़ भागी हित पन्थ लगैं जो वे ही ज्ञान निधान ।
बने जो पढ़ करके विद्वान, न चेतें तो वे निपट अजान ॥३॥
नर भव सफल जो हित कर जाते, यों तो देह अनेकों पाते ।
तज देते जो भोग 'मनोहर' वे ही पुरुष महान ।
भोग तजना शूरों का काम, भोगना भोग बड़ा आसान ॥४॥

(१०३)

आज पुरवासी करत किलोल, न जाने मो मन काय अडोल ॥टेक॥
कोई बदन विचित्र रंगावे, तकतहिं झट पहिचान न आवे ।
नाच नचावे ताल बजावे, भंड बचन दें बोल ॥१॥

http://sahjanandvarnishastra.org/

नर नारी मिल यों इठलावे, सोचत कहत लाज आ जावे ।
भीतर बाहर फाग मचावे, मन की बातें खोल ॥२॥
नार वियोगी कई पछतावे, पर कैसो सुख कहँ ते पावे ।
पै ये शोक न मो मन आवे, यहँ तो औरहि गोल ॥३॥
पुरवारी सब शोर मचावे, मो मन अर्हन् अर्हन् गावे ।
आज 'मनोहर' के मन अर्हन्, भक्ती को रंग घोल ॥४॥

(१०४)

लोग कहें घर मिट गयो, मगर मोरो सारो कारज बन गयो ॥टेक॥
उत्तम औषधि मंत्र किये ज्यों, विष अरु दाह मिटे तन के त्यों ।
ज्ञानामृत से भोग चाह मूर्च्छा हट ज्ञान प्रगट भयो ॥१॥
विषय हेत थो श्रम सो थक गयो, इनके हि खातिर जहं तहं शक भयो।
अब बे फिकर बनो जिनवर सों सांचो नेह प्रगट भयो ॥२॥
परिचय अरु विश्वास बढ़ो ज्यों, नार नेह आकुलित भयो त्यों ।
नार वियोग सुमित्र बनाकर चोखो भाग उदय भयो ॥३॥
विनशो मोह निमित्त 'मनोहर' तो अब सब सो ममता तज कर ।
निर्विकार निर्द्वन्द्व विकल्मष पंच परम गुरू पद नयो ॥४॥

(१०५)

जीवन दिन चार यार । अपनो हित सार सार ॥टेक॥
थावर विकलत्रयादि, पंचेन्द्रिय भांति भांति ।
तिन सब सों निकसि निकसि पाई नर देह सार ॥१॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

वर्ण जाति काय पर्म, श्रावक कुल जैन धर्म ।
सत्संगति शास्त्र श्रवण मिलते नहिं बार बार ॥२॥
काम नींद भय अहार, करते पशु औ गंवार ।
इनही में मरण होय तो न होय क्लेश छार ॥३॥
पर के सुख हेत यार लादत क्यों पाप भार ।
दुख हों जब पाप उदै होगा नाहिं कोई लार ॥४॥
निज को निज जान जान, पर को पर मान मान ।
तो न 'मनोहर' कबहूं ढूबोगे क्लेश वार ॥५॥

(१०६)

आज विषयन को छल लख पायो ॥टेक॥
ज्यों मृग मृगतृष्णा जल मानत कोशन कोशन धायो ।
त्यों मैं अहित विषय हित भ्रम कर तिन ही के गुण गायो ॥१॥
ज्यों कफ माहि मच्छिका उलझत उलझत प्राण गमायो ।
विषय मांहि त्यों उलझ उलझ कर अपनो ज्ञान गमायो ॥२॥
ज्यों गज मीन भ्रमर पंखी मृग तृष्णाहिं प्राण गमायो ।
अब तक मैं वीरान भयो त्यों तिन छल जान न पायो ॥३॥
उपल कमल ऊगे पश्चिम रवि अनल शीत हो जायो ।
पै न 'मनोहर' इन्द्रिय सुख में नेकहु मंगल गायो ॥४॥

(१०७)

मिटाना कठिन नाम की चाह ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

जो न जाय ये चाह न तब तक मिटै चित्त की दाह ॥टेक॥
धन वैभव जन त्याग सरल सब व्रत तप संयम दान ।
कठिन, न चाहे लोक प्रतिष्ठा लोकनि को सन्मान ॥१॥
अति मोही जन वंश चलावन सहत घोर संताप ।
हो न खास पर को गोदी ले वर जोरी हों बाप ॥२॥
छोड़ गृहस्थी भये वैरागी तोउ न छूटे आश ।
चाहे, मैं महाराज कहाऊं लोक बनें मो दास ॥३॥
है संसार चाह का फंदा जो मिट जाये चाह ।
तो पा जैहो झटिति 'मनोहर' मोक्ष महल की राह ॥४॥

(१०८)

मुक्ति मिले न मिले हमको प्रभु, चाहूं जो कुछ अर्ज सुनायें ।
द्वेष की ज्वाल से पिंड छुड़ायें, राग में अन्धे न हो पायें ॥टेक॥
ज्ञान अनन्त मिले न मिले प्रभु, केवल निज को जानत जायें ।
दर्श अनन्त मिले न मिले प्रभु, केवल आतम को लखि जायें ॥१॥
सौख्य अनन्त मिले न मिले प्रभु, आकुलता का ताप मिटायें ।
शक्ति अनन्त मिले न मिले प्रभु, खुद ही में खुद पैठत जायें ॥२॥
सुर नर पूज मिले न मिले प्रभु, हम ही निज को पूजत जायें ।
आदर मान मिले न मिले प्रभु, हम अपना आदर कर जायें ॥३॥
और विभूति मिले न मिले प्रभु, उनमें 'मनोहर' का हित पायें ।
पर की प्रीति रीति तज समता सार सुधा रस पीवत जायें ॥४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

(१०९)

वो थी भारी भूल हमारी ॥टेक॥
नारी तन गौरांग निहारयो, मधुर बचन सुन मन हरषायो ।
प्रेम भगति लखि यों मन भायो मैं जग में बड़ भागी ॥१॥
सम्बन्धी कृत आदर लखकर, सोचूं यह सब नारी बल कर ।
राग तिमिर में अन्धे होकर सारी सुध बिसराई ॥२॥
विरधापन तक साथ जियेंगे, मर कर भी हम साथ रहेंगे ।
ऐसी मिथ्या कर प्रतीति मैं व्यर्थ कियो मद भारी ॥३॥
धर्म कर्म जित तित मन भूले, पै सुदृष्टि निज ध्यान न भूले ।
त्यों उसकी प्रसन्नता के हित, करी विविध चतुराई ॥४॥
आश न जीवन में हित पाता, चतुश्चक्षु गर मिट न जाता ।
मान 'मनोहर' सार बात यह श्री अरहंत सहाई ॥५॥

(११०)

प्रभु मोरे जीवन की नैया भव सागर में अटकी ॥टेक॥
बहु संकल्प विकल्प तरंगे, लेती बढ़ बढ़ भारी उमंगे ।
जिनके वेग में नैया डूबत मोरी नाहीं वश की ॥१॥
फिर तारो तो चाहे बहादो, या फिर वारि पार पहुंचा दो ।
मैं तो जान गयो तुम तारण, तुमही सो अब खटकी ॥२॥
सांचो नेह तुमहीं में मेरो हूं तेरे चरणन को चेरो ।
मोकूं आश तुम्हारी भारी, तुम जानत घट घट की ॥३॥

http://sahjanandvarnishastra.org/

तुमही निर्मल गुण के पूरे और कुदेव काम मद भूरे ।
खुद अपनी नैया भव दधि में झटझट अट पट पटकी ॥४॥
जो उर ब्रह्मानन्द बसोगे, पार 'मनोहर' को न करोगे ।
ये मानूं कैसे मोरी तो डोर तुम्हीं सो लटकी ॥५॥

(१११)

न अपना ज्ञान धन खोता भिखारी क्यों बना होता ।
खुदी का खुद पुजारी तू कभी का बन गया होता ॥टेक॥
अचेतन अन्य चेतन में ये मेरे हैं मैं इनका हूँ ।
इसी दुर्बुद्धि से तो खा रहा भव सिन्धु में गोता ॥१॥
बना तू दास जिस तन का खिलाते सुख दिलाते हो ।
दुखी कर मिटने से पहिले दुखों का बीज बो जाता ॥२॥
तुझे है कामना का रोग इसका वैद्य न कोई ।
ये मिट भी जाते जड़ से गर चिकित्सक तू ही बन जाता ॥३॥
भजो चारित्र की औषधि मिलाकर ज्ञान के रस में ।
रखो परहेज विषयों का नहीं तो सर्व दुख दाता ॥४॥
लखो निज आत्म विद्या निधि मिटाओ दैन्य ये अपना ।
न सुख दुख कर 'मनोहर' देख कर जीवन में छिन सपना ॥५॥

(११२)

स्ववश परवश में भारी भेद ॥टेक॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

परवश पाय नरक वेदन चाहे न स्ववश कुछ खेद ।
जो बड़ भागी स्ववश तपैं तप बनत सदैव अखेद ॥१॥
चोर चुराले रिश्वत ले लें राज दंड दे लेत ।
पै न दान दो पाई का हैं चाहे हो तन छेद ॥२॥
परवश को सुख अथिर आपदामय पापों का हेत ।
स्ववश सहै कहुं रंच वेदना तो हो जाय अखेद ॥३॥
विपदायें जो आये पहले स्वागत ही कर देख ।
स्ववश भजो समता तज ममता मान 'मनोहर' चेत ॥४॥

(११३)

मन काहे भजे अरि नारी, मल मूत्र भरी घिन कारी ।
याही सो बनत दुखारी, काहे न तजे तू यारी ॥टेक॥
जो चिन्तत चित्त दुखावे, सेवत तन रोग बढ़ावे ।
ईश्वर से नेह छुड़ावे, आकुलता नित उपजावे ॥१॥
कामिनि के काम सताये, हा बारह वर्ष विताये ।
किन किन के चित्त दुखाये, प्रभु सो भी द्वेष बढ़ाये ॥२॥
अब नार का नाम न लूंगा, प्रभु का हीं ध्यान धरूंगा ।
न 'मनोहर' छिन विसरूंगा, प्रभु ध्यानहिं ध्यान मरूंगा ॥३॥

(११४)

बड़ा हैरान हूं स्वामी तुम्हें कैसे निहारूं मैं ।

http://sahjanandvarnishastra.org/

मैं खुद आऊं या मन भेजूं तुम्हीं को या बुलाऊं मैं ।।टेक।।

मैं खुद आऊं तिहारे दर्श करने को है अभिलाषा ।
मगर इस देह के विकराल फन्दे में फंसा हूँ मैं ।।१।।

न रागी हो न द्वेषी हो जगत के फन्द से न्यारे ।
नहीं जग जाल में आते कहो कैसे बुलाऊं मैं ।।२।।

मेरा मन मोह ने जकड़ा व तुम हो लोक के शिर पर ।
न शिवपथ मन ने देखा है कहो कैसे पठाऊं मैं ।।३।।

सिवा मन के पठाने के न कोई और चारा है ।
इसी को ही पठा कर जानकर मूरति निहारूं मैं ।।४।।

ये मन भावों से जा सक्ता न मन की मूर्त्ति जा पावे ।
तुम्हीं भावो से आ जावो तो मन में शक्ति आ जावे ।।५।।

दया सागर तुम्हारा रूप मुझ ही में बसा तो है ।
तुम्हारा तो विरद सांचा यहां अपराध मेरा है ।।६।।

अगर रति तोड़ दूं जो चेतना के रूप से पर है ।
मनोहर पद मनोहर का मनोहर से मनोहर है ।।७।।

(११५)

तीन टिकट; शिवपुर के तीन टिकट ।
तीन में हीन कछु रह जाये तो शिवनगर अघट ।
शिवपुर के तीन टिकट ।।टेक।।

सम्यक दर्शन ज्ञान चरण रत्नत्रय तीन कहावे ।
वीतराग संवेदन ज्ञानी को इक रूप लखावे ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

मूढ़नि को बहुत विकट ॥१॥
शुद्ध चेतना सम रस सागर उपादेय हित भावे ।
ऐसी दृढ़ प्रतीति हो जाके सम्यक् दर्श लहावे ।
मिटै जब मोह सुभट ॥२॥
जीवाजीव अर्थ, विघटत थिर रहत यथा परिणावे ।
न्यून अधिक मिथ्यात्व रहित थिर सम्यक्ज्ञान लखावे।
न हो अज्ञान निकट ॥३॥
ब्रह्म स्वरूप विराग विकल्मष चिदानन्द विज्ञानी ।
सम्यक् चारितवन्त रमै त्यों होय निजातम ध्यानी ।
बनै सुख कंद प्रगट ॥४॥
जो रत्नत्रय ध्यावे, सो नर चहुंगति के दुख नाशे ।
पाकर निज गुण कोष 'मनोहर' नित्यानन्द प्रकाशे ।
झरै विधि बैरी झट ॥५॥

(११६)

अविकारी-दुखहारी-सुखकारी तुमही हो ॥टेक॥
अन्तर्यामी ब्रह्मविरामी, वीतकाम, शान्ति धाम, बसते अभिराम धाम ।
अविनाशी, सुखराशी, शिववासी तुमही हो ॥१॥
शिवपथ नेता, विधि बल जेता, अतुल वीर, शर्म सीर, हरते भव त्रास पीर ।
निर्दोषी, संतोषी, गुणपोषी तुमही हो ॥२॥
आज 'मनोहर' पे करुणा कर, निराधार के आधार, जन्म जरा मर्ण टार ।
हितकारी, स्वविहारी, त्रिपुरारी तुमही हो ॥३॥

Version 1

(११७)

भैया जानो धर्म को मर्म ।
निज विभाव को उदय न पर पीड़ा तहँ सांचो धर्म ॥टेक॥
भेष बनाये काम सरे का भावहिं भाय कुकर्म ।
काम क्रोध मद लोभ कपट जहँ रंच तहां नहिं धर्म ॥१॥
मल मल न्हाये देह सजायें, शुचि हुइ है का चर्म ।
भोग विषय अभिलाष न हो तो तन जि॰ दोनों धर्म ॥२॥
वीतराग विज्ञान ज्ञान हित जो मिट जाये भर्म ।
चार कषाय ज्वाल से बचकर पा जैहो शिव शर्म ॥३॥
आकुलता की खान मोह रति द्वेष न हो तहँ धर्म ।
धर्म मर्म बिन बोध 'मनोहर' छूटै कभी न कर्म ॥४॥

(११८)

कैसे काटोगे जग जाल ॥टेक॥
पर पदार्थ की परिणति खातिर निश दिन बीतत काल ।
दुख अपमान सहत इस ही सो छूटत तऊ न कुचाल ॥१॥
जग की चाह अजग गति तेरी जग न चाह जगवाल ।
निज की लगन चहो न चहो जग यही हाल दुख टाल ॥२॥
नाम चाह जग आश पाश भट्टी में झौंको लाल ।
पर कुछ काम न आय 'मनोहर' तूही तुझको ढाल ॥३॥

(११६)

जब हम ही खुद के वश नहीं, दुनियां की क्या आशा करूं ।
किसके लिये मोही बनूं, खुद का ही कर्म खुद ही भरूं ॥टेक॥
तुम हो मेरे हम हैं तेरे, बंधन में फंसि इस जाल के ।
जिन सारिखा होकर भी मैं दुनियां की क्या आशा करूं ॥१॥
रावण से शूरों ने कभी, जिसके लिये झगड़े किये ।
तृण तक न साथ उनके गया, दुनियां की क्या आशा करूं ॥२॥
मैं एक हूँ असहाय हूँ, आज़ाद हूँ निर्लेप हूँ ।
सुख शान्ति से भरपूर हूँ, दुनियां की क्या आशा करूं ॥३॥

(१२०)

सुख हम ही में था नहीं जानो ।
धन जन में सुख की आशा कर नित आकुलता ठानी ॥टेक॥
चिन्तामणि सिर बांध काष्ठ का भार बहै नित जिम अज्ञानी ।
नाभि गन्ध के बोध बिना मृग की गति जिम बन में भरमानी ॥१॥
आंखन बांधी चश्मा पाठी सारो वस्तु विरंग दिखानी ।
सद्गुरु सत्य स्वरूप बतावे भ्रम वश ताकी एक न मानी ॥२॥
मिथ्यादर्शन ज्ञान चरण से पर परिणति में मति लिपटानी ।
मिथ्यादर्शन ज्ञान चरण बिन निज मति सुख को सीर बखानी ॥३॥
हूँ स्वतन्त्र आनंद ज्ञान घन मुझ से पर की दशा विरानी ।
पाऊँ अविचल शांति 'मनोहर' अब समता की जड़ पहिचानी ॥४॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

(१२१)

मैं कब ऐसो भाव उपाऊं ।
इष्ट अनिष्ट विषय निरखत भी नेह अनेह न लाऊं ।।टेक।।
रम्भ थम्भ सम दम्भ जगत के हा फिर क्यों ललचाऊं ।
भव पथ के सब पथिक यहां पर किन सो रार बढ़ाऊं ।।१।।
सुख चाहूं तो क्यों दुख कारण में मन अब बहलाऊं ।
दुख से भीत रहूं तो क्यों जग छल सुख माहिं लुभाऊं ।।२।।
गुणियों के गुण गान श्रवण कर नित अनुराग बढ़ाऊं ।
पर के दोष श्रवण कथनी में बधिर मूक कहलाऊं ।।३।।
विचल जगत काया में बसकर भी अविचल हो जाऊं ।
जीव अजीव, अजीव जीव नहिं हो क्यों फिर भय भाऊं ।।४।।
चाह बढ़ाऊं तो निश्चय सो पीड़ा में बध जाऊं ।
चाह दाह का नाश करूं तो मोक्ष 'मनोहर' पाऊं ।।५।।

(१२२)

'इतनी निगाह रखना जब प्राण तन से निकले ।
सम भाव सुधा पीना जब प्राण तन से निकले ।।टेक।।
सुत नार तात परिजन संसार के मुसाफिर ।
इनमें न मोह लाना जब प्राण तन से निकले ।।१।।
धन संपदा है माया चक्री भी यासों हारे ।
तिनका समान तजना जब प्राण तन से निकले ।।२।।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

विषफल समान सुन्दर दुख पाक भोग जग के ।
इनमें न प्यार करना जब प्राण तन से निकले ॥३॥
क्या भोग भोग डाले भोगों से खुद भुगे हम ।
उनका न ख्याल करना जब प्राण तन से निकले ॥४॥
चैतन्य चिन्ह चेतन चिन्तन से चेत जाना ।
डरना न छिन 'मनोहर' जब प्राण तन से निकले ॥५॥

(१२)

देश के वासियों,देह के साथियों,मोह था जब तलक भेद जाना नहीं।
हम जुदे तुम जुदे कर्म फल भोगते साथ जावे न कोईसाथ आया नहीं
॥टेक॥
हम तुम्हारे हैं तुम हो हमारे सुखद,बस इसी मोह में खुद को जाना नहीं।
दुःखदाई यही मोह दुश्मन बड़ा,मोह मुझमें न लाना दिलाना नहीं ॥१॥
भोग तृष्णा से शान्ती न होती कभी,चाह की दाह ही हो यही जानकर ।
जा रहा हूं शरण श्री गुरु के चरण, शांति पाऊंगा अरिहन्त का ध्यान
धर ॥२॥
मैं रहूंगा नहीं देश कुछ वर्ष तक, मोह बाधा न हो फिर यही ख्याल कर ॥
जाते जाते कछुक हित की बातें कहूँ ,चाहो कल्याण तो भूल जाना नहीं।
॥३॥
मित्र विद्या से धन धर्म सुख लाभ है,देश का जाति का अपना उद्धार है ।
अपने बच्चों को विद्या पढ़ाते रहो,एक विद्या बिना जीवना भार है ॥४॥
बरुवासागर की है पाठशाला निकट,बच्चे भर्ती करो काम लखते रहो ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

पाठशाला है क्या कल्प-तरु आपका,द्रव्य जल सींच हर दम बढ़ाते रहो ॥५॥

मित्र आपस में सच्चा करो संगठन,फूट सी दूसरी कोई आफत नहीं ।
बन्धु निर्धन व असहाय हों जाति के,तो गले से लगावो सतावो नहीं ॥६॥

मित्र जावेगा क्या साथ जब हो मरण,जिसपे पोढ़ोगे तृण भी नहीं जायेगा ।
मन्सा बदमन्सा से पुण्य व पाप हों,उनका फल ही तुम्हारे नज़र आयेगा ॥७॥

मित्र मिलता न हर दम मनुष का जनम,भोग ही में मरें कैसे छूटे करम ।
देव पूजा गुरूपास्ति स्वाध्याय तप, दान संयम सदा कर कमालो धरम ॥८॥

पर के दूषण के कहने में मत हर्ष कर, पहिले अपने ही औगुण को लख लो ज़रा ।
ज्ञानियों का समागम जुटाते रहो, उनके वचनों में ही सच्चा सुख है भरा ॥९॥

कर्म के सब घिरे दोष के हैं भरे, शिक्षा संतत न हो काम कैसे सरे ।
फिर भी शुद्धात्मा ही उपादेय है,ऐसा श्रद्धान कर ऐसा श्रद्धान कर॥१०॥

इच्छा कहता रहूँ पर समय न अधिक, अन्त में इस 'मनोहर' की अर्जी सुनो ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

मोह से द्वेष से मुझसे पहुंचा हो दुख, माफ करना मुझे माफ
करना मुझे ॥११॥

(१२४)

"बारह भावना" (व्रत प्रतिमा लेने के बाद)

दोहा

नमं नमं आनन्द घन है विराग विज्ञान ।
वमं वमं भव पीर सब करूं सुखामृत पान ॥टेक॥

छन्दः-हम सब चाहें जग के जीव, दुःख न हो सुख रहे सदीव ।
सुख के अर्थ भरयौ श्रम भार, सुख नहिं पायो कबहुं लगार ॥१॥

अनित्य भावना

तन धन पुत्र मित्र परिवार, परिणति इनकी इनके लार ।
मैं चाहूं मो माफिक रहें, सोचो फिर कैसे सुख लहे ॥२॥

अशरण भावना

तन धन गृह सुत किंकर नार, इनसे सुख जीवन श्रम धार ।
इनको दास न बन सुन भ्रात, कर्म उदै जीवन सुख सात ॥३॥

संसार भावना

हो न कबहुं दुख वह सुख सार, इन्द्रिय भोग हैं प्रकट असार ।
रंक राव सब तृष्णागार, सो असार सब विधि संसार ॥४॥

एकत्व भावना

बन्धु मित्र जाने सुखकार, तेरो सुख तुझ मांहि अपार ।

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

सो भूल्यौ कीनो विधि बन्ध, तातें विपदा को सम्बन्ध ॥५॥

अन्यत्व भावना

जो तू यह तन तज कर जाय, तेरो तन फिर नाहिं कहाय ।
ऐसे इस तन से तू भिन्न, तो न विराने होंय अभिन्न ॥६॥

अशुचि भावना

खून पीव मल मूत्र मलीन, ऐसे तन से का रति कीन ।
तेरो तो शुचि ज्ञान शरीर, परम शान्ति अमृत रस सीर ॥७॥

आश्रव भावना

मन वच तन के चंचल होत, होत विचल यह आतम ज्योति ।
सो ही विधि को आवन द्वार, तातें चंचलता निरवार ॥८॥

संवर भावना

कर्म रुकै कारज बन आय, ताको भाई एक उपाय ।
शुद्ध निजातम परिणति देख, यही कोटि शास्त्रनि को लेख ॥९॥

निर्जरा भावना

जैसी रुके विषय की चाह, शान्त होय सब तृष्णा दाह ।
पूर्व बद्ध विधि होय अबन्ध, हो अनन्त सुख को सम्बन्ध ॥१०॥

लोक भावना

तीन लोक के सब ही थान, उपज्यौ मर्‌यौ भयो दुख खान ।
नाना विधि इन्द्रिय सुख लह्यो, तो भी टुक सन्तोष न गह्यौ ॥११॥

बोधिदुर्लभ भावना

मिले मिले सुरपति के भोग, कंचन कामिनि को संयोग ।

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

विस्मय नहीं सुलभ सब जान, दुर्लभ है स्वातम सरधान ॥१२॥

धर्म भावना

नहीं राग नहिं द्वेष न मोह, न हो विविध कल्पन संदोह ।
तत्व भासना केवल होय, सोही धर्म सत्य सुख जोय ॥१३॥

दोहा

को मैं आयो किधर से, जाऊंगा किस ओर ।
चितवत चितवत एक दिन, पा लूंगा शिव ठौर ॥१४॥
आत्म प्रगट लखते सभी, विश्व प्रगट हूं होय ।
पै निज आनँद लीनता हर न सके टुक कोय ॥१५॥
हे स्वतन्त्र विज्ञानमय वीतराग भगवान ।
बसो 'मनोहर' के हृदय गलै मोह की शान ॥१६॥

(१२५)

मत राग करो मत द्वेष करो, यहँ कोइ किसी का नहीं हुआ ।
ज्ञाता द्रष्टा तेरा स्वभाव-यों आप भूल क्यों दुखी हुआ ॥१॥
जनमत ही तो ये काम क्रोध, माया मद लोभ न कहीं दिखा ।
ज्यों ज्यों बढ़ती गई तेरी आयु, किसके बहकाये भ्रमी हुआ ॥२॥
जिनको तू अपना कहता था, तुझको जो अपना कहते थे ।
वे रहे नहीं तू नहीं गया, फिर क्यों इनमें बेहोश हुआ ॥३॥
जो होता है वह होने दो, तू हंस न उनमें रागी हो ।
यह मायामय वैभव तेरा, न है, होगा, न कभी हुआ ॥४॥

Version 1

http://sahjanandvarnishastra.org/

"आत्मकीर्त्तन" (क्षुल्लकव्रत लेने के बाद)

हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम ।
ज्ञाता दृष्टा आतम राम ॥टेक॥

मैं वह हूँ जो हैं भगवान,
जो मैं हूँ वह हैं भगवान ।
अन्तर यही ऊपरी जान,
वे विराग यहँ राग वितान ॥१॥

मम स्वरूप है सिद्ध समान,
अमित शक्ति सुख ज्ञान निधान ।
किन्तु आश वश खोया ज्ञान,
बना भिखारी निपट अजान ॥२॥

सुख दुख दाता कोई न आन,
मोह राग ही दुख की खान,
निज को निज पर को पर जान,
फिर दुख का नहिं लेश निदान ॥३॥

जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम,
विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम ।
राग त्याग पहुँचूं निज धाम,
आकुलता का फिर क्या काम ॥४॥

Report any errors at vikasnd@gmail.com

http://www.jainkosh.org

होता स्वयं जगत परिणाम,
मैं जग का करता क्या काम ।
दूर हटो पर कृत परिणाम,
ज्ञायक भाव लखूं अभिराम ॥५॥

(१२७)

"आरती" (क्षुल्लक व्रत लेने के बाद)

ॐ जय जय अविकारी ॥टेक॥
काम क्रोध मद लोभ न माया, समरस सुखधारी ।
ध्यान तुम्हारा भव्य जनों के सकल क्लेश हारी ॥१॥
हे स्वभावमय जिन तुम चीना, भव संतति टारी ।
तुव भूलत भव भव में भटकत, सहत विपति भारी ॥२॥
पर सम्बन्ध बंध दुख कारण, करत अहित भारी ।
हे निज ब्रह्म लीनता तरा, चहूँगति दुख हारी ॥३॥
ज्ञानमूर्त्ति हे सत्य सनातन, मुनि मन सञ्चारी ।
निर्विकल्प ज्ञायक परमातम, शुचि गुण भंडारी ॥४॥
बसो बसो हे सहज ज्ञान घन, सहजशांतिचारी ।
टलैं टलैं सब मोह उपद्रव, पर बल बलधारी ॥५॥

कृष्णा प्रिंटिंग प्रेस, मुजफ्फरनगर ।
Version 1